अंधेरे साये



अन्धेरे साये

दहेज विरोधी पुरस्कृत सिन्धी एकांकियों का संकलन

प्रकाशकः
राजस्थान सिन्धी अकादमी
जे–7, सुभाष मार्ग,
सी–स्कीम, जयपुर–302001
संस्करण : 1989
मूल्य : तीस रुपये मात्र
अनुवाद : राधाकृष्ण चांदवानी
मुद्रक : कमल मुद्रणालय, जयपुर ।

ANDHERE SAAYE (Collection of One Act Plays)
Translated by Radhakrishan Chandwani Price Rs. 30.00

पूर्वकथन

अल्प भाषा-भाषी वर्ग के हितों के संरक्षण के लिये राजस्थान सरकार ने राज्य के विभिन्न भाषायी अकादमियों की स्थापना की है। भारत में सर्वप्रथम राजस्थान सरकार ने सिन्धी साहित्य, कला, संस्कृति एवं सभ्यता के विकास तथा संरक्षण हेतु राजस्थान सिन्धी अकादमी नामक संस्था वर्ष 1979 में स्थापित की। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य है राज्य के विभिन्न भागों में बसे अल्प भाषा-भाषी सिन्धी समुदाय के साहित्य, संस्कृति एवं कला का संरक्षण करना। विभाजन के बाद सिन्धी समुदाय के लोग विभिन्न राज्यों में बस गये एव वहां के स्थानीय संस्कारों का उन पर प्रभाव पड़ा, फिर भी सिन्धी साहित्यकारों ने अपनी मातृभाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति का प्रयास जारी रखा।

हमारे समाज में दहेज एक नासूर की तरह फैल गया है, जिससे कई परिवार रसातल की ओर जा रहे हैं और कई अबलाओं की जिन्दगी नरक हो रही है। आये दिन नई-नई विवाहित युवतियों का मरना, उन्हे घर से निकाल देना एवं उन्हें प्रताड़ित करने जैसी घटनायें बढ़ रही हैं। यद्यपि सरकार ने इस दहेज को समाप्त करने के लिए कई कायदे कानून बनाये हैं किन्तु जब तक समाज में स्वयं अपनी चेतना नहीं आती तब तक इस बीमारी से बचना संभव नहीं है। जनसाधारण में दहेज के लिये नफरत पैदा हो और समाज की मनोवृत्ति में परिवर्तन आये, इस बात को ध्यान में रखकर अकादमी की ओर से अखिल भारत एवं राज्य स्तर पर दहेज की समस्या पर एकांकी नाटकों की एक प्रतियोगिता आयोजित की

गई थी। इस प्रतियोगिता में काफी संख्या में प्रविष्टियां प्राप्त हुई, उनमें से अखिल भारत एवं राज्य स्तर पर प्रथम एवं द्वितीय आने वाली एकांकियों का चुनाव कर, उन्हें संकलन के रूप में हम पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं।

साहित्यिक आदान-प्रदान योजना के अन्तर्गत सिन्धी एकांकी का हिन्दी अनुवाद हमें हिन्दी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं। इससे पूर्व भी अकादमी द्वारा सिन्धी कहानियों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया जा चुका है। आशा है हिन्दी पाठक वर्ग इस संकलन का स्वागत करेंगे।

कान्ता कथूरिया
अध्यक्ष
राजस्थान सिन्धी अकादमी

एकांकी नाटक १

नामर्द कहीं का !

लखमी खिलाणी

पात्र—

निहालचन्द	गृह स्वामी	आयु 48 वर्ष
कला	गृह स्वामिनी	आयु 45 वर्ष
हरीश	पुत्र	आयु 22 वर्ष
निम्मी	पुत्री	आयु 24 वर्ष
पिंकी	पुत्री	आयु 10 वर्ष
अतिथि		
मोतीराम	पति	आयु 50 वर्ष
पार्वती	पत्नि	आयु 46 वर्ष
राकेश	पुत्र	आयु 26 वर्ष

(ड्राईंग रूम का दृश्य । बीच में सोफ़ा सेट और कालीन है । दाहिनी तरफ पुस्तकों की आलमारी, उसके पास मेज-कुर्सी । बायीं तरफ दीवार पर गुरु नानक भक्त कंवर राम और झूलेलाल के चित्र टंगे हुए हैं । इन चित्रों के नीचे दीवार में लगे तख्ते पर पूजा की थाली में धूप, अगरबत्तियां रखी हुई हैं और बिजली का हल्की रोशनी वाला बल्ब जल रहा है । दाहिनी तरफ घर से बाहर जाने का दर-वाजा है और बायीं तरफ घर के अन्दर जाने का दरवाजा है । पीछे बालकनी या बरामदा । उसके सामने रेलिंग्स और फूलों के गमले हैं । बालकनी के पीछे आकाश दिखाने के लिए (Cyclorama) का सफेद पर्दा टंगा है ।

बांसुरी के आलाप के साथ पर्दा उठता है । मंच पर पूर्ण अन्धेरा । केवल बिजली के बल्ब की हल्की रोशनी दिखाई देती है । कुछ क्षणों बाद माचिस की तीली जलती है । कला धूप, अगरबत्तियां जलाकर पूजा की थाली में लगाती है । सिर पर साड़ी का पल्लू डालकर आरती करती है । सिर झुकाती है । पीछे साइ-क्लेरिमा के पर्दे पर धीरे-धीरे सवेरा होता हुआ दिखाई देता है ।)

कला— (हाथ जोड़कर रुद्धकण्ठ से विनय भरे स्वर में) गुरु बाबा, मेरी मनोकामना पूर्ण करो। लड़के वाले निर्मला को पसन्द कर जाएं तो मैं ग्राप पर रेशमी रूमाल चढ़ाऊंगी। सवा रुपये का कड़ाह प्रसाद कराऊंगी। हे भूलेलाल, जोतियों वाले, मेरी बेटी को भी ग्रच्छा वर-घर दिलवा दो, मैं नदी पर अखा चढ़ाऊंगी, ग्रापका बहिराना निकालूंगी। हे भक्त कंवर ग्रनाथों के नाथ, ग्रापने तो सदा दीन-दुखियों की लाज रखी है। ग्रब इस दुखियारी की लाज भी ग्रापके हाथ है। बच्ची जाकर ग्रपने घर सुखी हो। हम तो रिश्ते कहलवाते कहलवाते थक गए हैं। आज ग्राप ही हमारे सहायक बनिये। लड़के के माता पिता के हृदय में ग्राप ही ग्राकर वास करिए, ताकि ग्राज वे लोग निर्मला को पसन्द करके 'हाँ' कह जायें, 'हां' कहकर जायें मेरे प्रभु, मेरे गुरु बाबा, 'हां' कह जायें.......हां.......

(कला हल्का सा सुबकते हुए, मूर्ति के सामने अपना सिर बार-बार झुकाती है.......कुछ क्षणों की शान्ति। सिसकियों की ग्रावाज....... ग्रन्दर से 'कला!...........ग्रो कला' ग्रावाजें देता हुग्रा निहाल चन्द कमरे में प्रवेश करता है। कमरे में पूर्ण रोशनी फैल जाती है।)

निहालचन्द—(बायीं तरफ देखते हुए) कहां गायब हो गई। मेहमान ग्राने वाले हैं, पर ग्रभी तक पूरी तरह से घर की सफाई ही नहीं हुई है। कला! (कला को पूजा में मग्न देखकर) अरे, तुम यहां खड़ी हो ग्रौर मैं सारा घर ढूंढ़ ग्राया हूँ।

(निहाल चन्द ग्रागे बढ़कर कला की पीठ पर हाथ रखता है। कला मुँह फेर कर साड़ी के पल्लू से ग्रपनी आंखें पोंछती है।)

निहाल चन्द—(गम्भीर स्वर में) मन छोटा मत करो! सब ठीक हो जायेगा। इस बार गुरु बाबा जरूर लाज रखेंगे। मोतीराम मेरा बचपन का यार है। वह हमारी बात नहीं टालेगा। हरीश मिठाई लेने गया है। तुम पापड़-वापड़ तल लो। ग्रौर देखो निर्मला को भी तैयार कर लो। कह देना वह जीन्स या स्कर्ट पहनने की जरूरत नहीं है, साड़ी पहन कर ग्राए। मोतीराम पुराने विचारों का ग्रादमी है।

कला— कितने लोग ग्रा रहे हैं?

निहाल चन्द—सेठ मोतीराम खुद, उसकी पत्नी पार्वती ग्रोर उनका बेटा राकेश। ग्रगर राकेश को निर्मला पसन्द ग्रा गई तो फिर ग्राज ही शगुन की मिश्री वे लोग ले जायेंगे। (घड़ी की तरफ देखकर) उनके ग्राने का समय हो गया है। तुम जल्दी करो!

(कला अन्दर चली जाती है। निहाल चन्द अपने कन्धे पर रखे हुए तौलिए से सोफा को झाड़ने लगता है। दरवाजों पर लगे हुए पर्दों को ठीक करता है। होठों-होठों में कुछ भिनभिनाता हुआ वह चित्रों के सामने आकर खड़ा हो जाता हैं। जेब से एक सिक्का निकाल कर थाली में डालता है और दोनों हाथों से ज्योति पर हाथ फेर कर मुँह पर रखता है। चित्रों के सामने हाथ जोड़कर मानों कोई मन्नत मानता है।)

निहालचन्द—(अन्दर वाले दरवाजे के पास खड़े होकर) हरीश ! ओ हरीश !! (हरीश अन्दर के बजाय बाहर के दरवाजे से प्रवेश करता है। उसके हाथ में मिठाई का पैकेट है और दूसरे हाथ में पकड़े हुए थैले में दूसरा सामान है।)

हरीश— बाबा ! आप मुझे आवाज दे रहे थे ?

निहालचन्द— नहीं ! तुम्हारे बाप को आवाज दे रहा था........कहां गये थे ?

हरीश— आप ही ने तो बाजार से मिठाई, समोसे और दाल-सेव लेकर आने को भेजा था।

निहालचन्द— अच्छा-अच्छा, अब जल्दी कर मेहमान आने वाले हैं........मेरा मुँह क्या देख रहे हो। (पैकेटों की तरफ इशारा करते हुए) अन्दर रखकर आओ तो यह कमरा ठीक कर लें। (हरीश अन्दर जाकर पैकेट और थैला रखकर तुरन्त लौट आता है। दोनों बाप-बेटा मिलकर, सोफा सेट को 90^0 का कोण बनाकर रखते हैं। उनके बीच में दो चौकोर सेटीज (Settees) रखते हैं। हरीश सेन्टर टेबल फूलदान और राखदानी (Ash-tray) लाकर रखता है। कुछ क्षणों के लिए दोनों फुर्ती से कमरे को सजाने के लिए दौड़-भाग करते हैं। अचानक दरवाजे की घन्टी बजने से दोनों जहां के तहाँ बुत बनकर खड़े हो जाते हैं। घन्टी एक बार........दूसरी बार और अन्त में तीसरी बार बजने के बाद निहालचन्द के शरीर में गति उत्पन्न होती है।)

निहाल चन्द— ऐसे बुत क्यों बन गए हो ? मेहमान आ गये हैं, दौड़कर दरवाजा खोलो !

(हरीश बाहर जाने वाले दरवाजे से बाहर चला जाता है। निहालचन्द अपना पाजामा, कुर्त्ता और जाकेट ठीक करता है। खूंटी पर टंगी टोपी उतार कर पहनता है। मेहमानों को अन्दर प्रवेश करता देखकर मुस्कराता उनका स्वागत करता है।)

निहालचन्द— (आगे बढ़कर मोतीराम को गले लगाते हुए) धन्यभाग हमारे जो आप पधारे। (पार्बती की तरफ देखकर) नमस्ते भाभी ! कैसी हैं ?

आइये-आइये, इस तरफ सोफा पर आराम से बैठिए (राकेश से) कैसे हो बेटे, आओ यहां बैठो ।

मोतीराम— (वहीं खड़े-खड़े, पहले पूरे कमरे को देखकर, फिर निहालचन्द को ऊपर से नीचे तक देखते हुए) यार निहाल ! तुम तो पहले से काफी बूढ़े हो गये हो । जवानी में तुम क्या ही गामा पहलवान हुआ करते थे ।

निहाल चन्द—यार ! वे सिन्ध के जमाने थे । वह खाना-पीना, वह हवा-पानी यहां-कहां ? यहाँ हिन्दुस्तान में तो हर चीज में मिलावट है । लोग वही खाने खा-खाकर खुद भी मिलावटी बन गये हैं ।

मोतीराम— यार कहते तो सच हो । सयाने कह गए हैं, जैसा अन्न वैसा मन !

निहालचन्द— (हरीश को वहीं खड़ा देखकर) जाओ, जल्दी अपनी माँ को बुला लाओ । मेहमानों के लिए चाय-पानी की भी व्यवस्था करो । (हरीश अन्दर चला जाता है ।)

पार्वती— (कमरे को देखते हुए) फ्लेट तो अच्छा सजाया है, भैया ! जरूर अपना ही लिया होगा ।)

निहालचन्द— (घबराकर) हां भाभी ·· अपना हो समझिए । (कला अन्दर से आती है । पार्वती से गले मिलती है ।)

कला— ठीक तो हैं न ?

पार्वती— आप ठीक हैं ? (राकेश से) बेटे ! आंटी को नमस्ते करो ! (राकेश चेहरा उतार कर दोनों हाथ जोड़ देता है ।)

पार्वती— बड़ा शर्मीला लड़का है ।
(हरीश दो प्लेटों में मिठाई, पकोड़े, समोसे और पापड़ आदि लाकर सामने टेबिल पर रखता हैं ।)

कला— (प्लेट हाथ में लेकर) लीजिए ।
(सब प्लेट में से एक-एक पकोड़ा उठाते हैं)

निहालचन्द— (हरीश से) बेटे खड़े मत रहो ! जाओ पानी के गिलास लेकर आओ और निर्मला से कहो, चाय बनाकर ले आये । (हरीश मुँह कडुवा-सा कर अन्दर जाता है)

पार्वती— बेचारे को क्यों लेफ्ट-राईट करा रहे हैं । नौकर को ही बुला लीजिये ।

कला— बहिन, नौकर की घर वाली को भी आज ही बीमार होना था । इन नौकरों की आजकल बड़ी मुसीबत है । आज माँ बीमार है, आज बाप बीमार है तो आज बेटी बीमार है । मुए बारहों महीने घर भागे रहते हैं ।

(निर्मला ट्रे में चाय की प्यालियां रखकर लाती है और पिंकी बिस्कुटों की प्लेट। दोनों लाकर सामने रख देतीं हैं। पीछे से हरीश पानी के गिलास लेकर आता है। जो मांगता है उसे गिलास देता है।)

पार्वती— (प्यार से) आओ बेटी, मेरे पास बैठो। (पिंकी पीछे सोफा का सहारा लेकर खड़ी हो जाती है। कला सब को पकोड़े, पापड़ देती है। पार्वती प्लेट लेकर निर्मला की तरफ बढ़ाते हुए) लो बेटी, तुम भी खाओ! (निर्मला इन्कार में सिर हिलाती है।)

कला— नहीं, इसे ज्यादा मत कहिए — आज शुक्रवार है। यह शुक्रवार को सन्तोषी माता का व्रत करती है।

पार्वती— सन्तोषी माता का व्रत करती है? बहुत अच्छा करती है। सन्तोषी माता इसकी मनोकामना जरूर पूरी करेंगी। बेटी सन्तोषी माता का वह भजन तो हमें सुनाओ। सुना है तुम बहुत अच्छा गाती हो।

पिंकी— (पीछे खड़े-खड़े) आंटी, निम्मी दीदी नाचती भी बहुत अच्छा है।

कला— (पिंकी को डांटते हुए) तू चुप रह। तुम्हें बीच में बड़बड़ करने को किसने कहा?

पार्वती— तुम्हारी यह बेटी तो सिन्धी में बात कर रही है?

कला— (घबराकर) नहीं-नहीं! हमारे बच्चों को तो सिन्धी में बात करना ही नहीं आता। जब देखो तब हिन्दी और अंग्रेजी में ही गिटपिट करते रहते हैं।

मोतीराम— निहालचन्द, तुम्हारी बेटी तो कान्वेन्ट में पढ़ी है न? अंग्रेजी तो फटाफट बोलती होगी।

निहालचन्द— हाँ, फटाफट! बिल्कुल फटाफट। निम्मी, अंकल को वह अंग्रेजी गाना तो सुनाओ।

पार्वती— सुनाओ-सुनाओ शर्माओ नहीं!

(निम्मी हिचकते-हिचकते एक अंग्रेजी गाने की पंक्तियां गुनगुनाती है। पीछे खड़ी पिंकी भी सुर में सुर मिलाती है।)

डू—ए डीयर ···· ए फीमेल डीयर
रे—अ ड्रॉप ऑफ गोल्डन सन
मी—अ नेम आइ काल माइ सेल्फ
फार—अ लांगर वे टु रन ····

मोतीराम— (ताली बजाते हुए) गुड! वेरी गुड!! क्यों पार्वती!

पार्वती— हां, गला तो अच्छा है। हमें तो यह मुई अंग्रेजी समझ में आती नहीं! पर आजकल के लड़के हैं। कहते हैं लड़की को सिन्धी आये न आये, अंग्रेजी जरूर आनी चाहिए।

मोतीराम— निहालचन्द ! हमें तुम्हारी बेटी पसन्द है। हमारी तरफ से 'हाँ' समझो। क्यों राकेश ? कहो-कहो ! बेटे, शादी तुम्हें करनी है। मुझे नहीं ! अच्छी तरह देखभाल कर बताओ। सब ठीक-ठाक है तो ·······अरे शर्माते क्यों हो ? कहो हाँ ! (राकेश सिर हिलाकर 'हाँ' कहता है)

पार्वती— (निम्मी से) यहां मेरे पास आकर बैठो, बेटी ! आज से तुम हमारी बेटी हुई।

(माँ के पास से उठकर निर्मला पार्वती के पास (छोटी कवर सेटी पर) आकर बीच में बैठ जाती है।)

मोतीराम— (निहालचन्द से) निहालचन्द ! आज ही पण्डित को बुलवाकर शादी का मुहूर्त निकलवाओ। सुना है जल्दी ही कोई तारा डूबने वाला है। फिर साल भर तक शादी का कोई मुहूर्त नहीं है।

निहालचन्द—(खड़े होकर) सेठ मोतीराम, मैं किन शब्दों में आपका आभार मानूं ? आपने मेरे सिर से बहुत बड़ा बोझ हटा दिया !

मोतीराम— (उठकर निहालचन्द को गले लगाते हुए) अरे यार, तुम तो बड़े भावुक हो ! हम दोनों एक ही गाँव के हैं। सिन्ध से एक-दूसरे को जानते हैं। पहले सिर्फ दोस्त थे, आज से आपस में समधी हुए। आज से तुम्हारी इज्जत मेरी इज्जत। तुम्हारा दुख मेरा दुख। आज के बाद हम एक-दूसरे के दुख-सुख में साझेदार हुए, क्या समझे ?

निहालचन्द—(मोतीराम को फिर गले लगाते हुए) समझ गया श्रीमान्, अच्छी तरह समझ गया ! आज भी संसार में आप जैसे देवता पुरुष हैं, तभी तो संसार चल रहा है।

कला— हमें भी राकेश बहुत पसन्द है। क्यों बेटी, तुम्हें भी पसन्द है न ? (राकेश से) आओ बेटे तुम यहाँ मेरे पास आकर बैठो। आज के बाद हरीश की तरह तुम भी मेरे बेटे हुए। (पीछे लिखने की मेज के सामने कुर्सी पर हरीश बैठा है। अभी तक वह कोई पुस्तक पढ़ने का बहाना बनाए बैठा है। पर उसका पूरा ध्यान हो रही बातचीत की तरफ है। माँ की बात सुनकर ताली बजाता है—"हीयर ! हीयर !!" राकेश उठकर निम्मी के पास में बीच वाली 'सेटी' पर आकर बैठता है। पिंकी अपनी बड़ी बहिन निम्मी के कान में कुछ कहती है। निम्मी मुस्करा देती है। हरीश रसगुल्लों की प्लेट उठाकर बांटता है। कुछ देर के लिए हंसी-खुशी खिल-खिलाहट का वातावरण रहता है।)

हरीश— (मोतीराम की तरफ प्लेट बढ़ाते हुए) लीजिए रसगुल्ला खाकर मुंह मीठा कीजिये। आज खुशी का अवसर है. हमारे घर में आज दीवाली है।

मोतीराम— (एक रसगुल्ला उठाकर मुंह में डालता है।) वाह ! रसगुल्ले तो बहुत स्वादी हैं।

हरीश— एक और लीजिये अंकल !

मोतीराम— नहीं-नहीं, डाक्टर ने मिठाई खाने को मना किया है।

निहालचन्द— डायब्टीज ?

मोतीराम— डायब्टीज हो हमारे दुश्मनों को। यूंही वजन घटाने के लिए डाक्टर ने मना किया है।

कला— (स्वयं प्लेट आगे बढ़ाकर) तो फिर एक और भी लीजिये न ?

मोतीराम— नहीं....नहीं ?

कला— समधिन का हाथ लौटाएंगे ?

(मोतीराम एक रसुगुल्ला और उठा लेता है।)

कला— (निहालचन्द से) एक आप भी खिलाइये इन्हें। ऐसे खुशी के अवसर रोज़-रोज़ थोड़े ही आते हैं।

(मोतीराम का मुंह रसुगुल्लों से भर जाता है। हरीश दोनों को चाय के कप देता है)

निहालचन्द— बैठे हैं तो लगे हाथ लेन-देन की बात भी कर ही लें। बाद की किसी गलत फहमी से. अच्छा है पहले ही बात साफ कर ली जाये। आप तो जानते हैं सेठ मोतीराम. मैं मझले-दर्जे का आदमी हूं। काम-चलाऊ आमदनी है....।

मोतीराम— (बीच में ही काटते हुए) बड़े भावुक हो ! तुम तो जानते हो मैं दहेज के सख्त खिलाफ हूँ। सिन्ध से पक्का कांग्रेसी हूं। क्यों राकेश की मां, तुम क्या कहती हो ?

पार्वती— (निम्मी के गले में बांह डालते हुए) हमें तो बस अच्छी लड़की चाहिए। घर में सुन्दर-सुलक्षणी बहू आई. तो समझेंगे हमें लाखों मिले।

मोतीराम— (निहालचन्द से) देखा. मैंने क्या कहा तुम्हें। हमारे घर के सभी सदस्यों के विचार एक हैं, शुद्ध कांग्रेसी !

निहालचन्द— आप ठीक फरमा रहे हैं। फिर भी हमें तो कन्या को हाथ जोड़ने ही है। आखिर उठना-बैठना तो अपने समाज में ही है।

मोतीराम— नहीं निहालचन्द नहीं, नहीं ! यह पाप-कर्म हम से मत करवाओ। किसी से भी अपने मुंह से कुछ मांगना, भीख मांगने के बराबर है। भगवान ने हमें सब कुछ दिया है। अपने मकान, अपनी कारें, दुकान-वुकान सब अपने हैं। तुमसे चार पैसे लेकर अपनी नाक पर मैल लगानी है क्या ? यह काम शान-मान वालों का नहीं है जो पराये माल को ताकते फिरें। यह सब तो कंगालों और लूले-लंगड़ों को ही शोभा देता है।

निहालचन्द— फिर भी, अपनी बेटी को खाली हाथ घर से थोड़े ही विदा करेंगे। हमारे लिए जैसे बेटे वैसी बेटियां !

मोतीराम— वाह-वाह, क्या ही सुन्दर विचार हैं तुम्हारे निहालचन्द। खानदानी घरों के यही लक्षण होते हैं। मैं पहले से ही जानता था कि सेठ निहालचन्द अपनी बेटी को कम नहीं मानेगा।

निहालचन्द— अपनी शक्ति के अनुसार जो भी होगा कन्या को जरूर देंगे। बाद में पछताने से अच्छा पहले ही साफ-साफ बात कर ली जाये। आप खुद देख रहे हैं, आज इस दहेज दानव ने कितनी अबोध कन्याओं की जिन्दगी बरबाद कर दी है। बहुओं को जिन्दा आग में जलाने की कितनी घटनाएं रोज़ समाचार-पत्रों में छपती हैं। सास-ससुर और पति मिलकर, लड़की को रस्सी से बांधकर, ऊपर घासलेट छिड़कर माचिस की तीली से. . . (स्टेज पर अन्धेरा) . . . पीछे साइक्लोरमा के पर्दे पर प्रोजेक्टर से फिल्म द्वारा या 'शैडोप्ले' द्वारा माचिस का जलना दिखाया जाता है। आग की लपटों में जलती स्त्री, "बचाओ ! बचाओ !" चिल्लाती दिखाई दे रही हैं · · · दो मिनटों के बाद यह दृश्य लुप्त होकर स्टेज पर फिर से रोशनी फैल जाती है। मोतीराम और पार्वती अपने आंसू पोंछते दिखाई देते हैं।)

पार्वती— ऐसे सास-ससुर इन्सान नहीं, शैतान कहे जायेंगे।

मोतीराम— दैत्य कहो दैत्य ! तभी तो मैं दहेज के सख्त खिलाफ हूँ।

पार्वती— विश्वास रखिये ! यह जैसी आपकी बेटी है वैसी ही मेरी बेटी है। (निम्मी के गले में बांह डालते हुए।)

मोतीराम— निहालचन्द, अभी मेरी भी दो कुंवारी बेटियां बैठी हैं। मैं तुम्हारा दर्द अच्छी तरह समझ सकता हूँ। अगर मैं तुम्हारी बेटी के साथ गलत व्यवहार करूंगा तो मेरी बेटी के साथ भी उसकी ससुराल वाले वैसा ही व्यवहार करेंगे। यही सृष्टि का नियम है।

निहालचन्द— आप जैसे समझदार और सयाने इस पृथ्वी पर बहुत कम हैं सेठ मोतीराम ! अगर सब पराई बेटी को अपनी बेटी समझें तो इस संसार का सारा दुख-क्लेश ही दूर हो जाये। आपने अपना मन खोलकर मुझे अपनी बात कही है तो अब मैं भी खुले मन से आप से कह रहा हूँ कि अपनी शक्ति अनुसार अपनी बेटी को देने में कोई कसर उठा नहीं रखूंगा। आप नकद लेना चाहें या सामान के रूप में लें।

मोतीराम— बार-बार वही बात दोहरा कर तुम हमें शर्मिन्दा कर रहे हो। मैंने तुम्हें कहा न हमें तुम्हारी एक काली कौड़ी भी नहीं चाहिये। जो कुछ देना हो अपने बेटी-दामाद को दो। वे दोनों सामने बैठे हैं। क्या मजाल जो मैं एक शब्द भी मुंह से कहूँ . . . !
अरे रकेश ! तुम क्यों अपने होठों को चूना लगाये बैठे हो ? शादी के बाद तुम हमारे साथ रहोगे या अपना नया फ्लैट लेकर रहना चाहोगे। कहो-कहो शर्माओ नहीं।

राकेश— (तोते की तरह याद किया गया पाठ दोहराते हुए) शादी के बाद हम अपने अलग फ्लैट में रहना चाहेंगे डैडी !

मोतीराम— शाबाश ! जो कुछ मन में हो साफ-साफ कह दो। जैसा पिता वैसा ससुर। ससुर से मांगकर लेने में कैसी लाज-शर्म ! यहां तो सेठ निहालचन्द खुद ही तुम्हें सब कुछ देना चाहता है। क्यों मैं गलत कह रहा हूँ ?

निहालचन्द—(हाथ जोड़कर) हम में जैसी शक्ति होगी।

मोतीराम— नहीं-नहीं, बरतन-वरतन, कपड़े-लत्ते, सोना-चांदी, हीरे-मोती या किन्हीं और चीजों पर अपने पैसे फिजूल खर्च मत करो। तुम्हारे बेटी-दामाद अलग रहना चाहते हैं तो उन्हें एक फ्लैट दिला दो। फ्लैट में एयरकण्डीशनर, कलर टी. वी., वीडियो लगा दो तो तुम्हारी मर्जी। गलीचों-सोफा सेटों से सजा दो तो तुम्हारी मर्जी। घूमने के लिये दो घोड़ों वाली टम-टम उन्हें ले दो या टोवायटो डट्सन कार, तो भी तुम्हारी मर्जी। क्या मजाल जो अब मैं अपने मुंह से एक शब्द भी कहूँ ! तुम्हारी बेटी सुखी रहे, घर में राज करे, इसमें भला मैं क्यों दुखी होऊंगा ! क्यों पार्वती, मैं ठीक कह रहा हूँ ?

पार्वती— बिलकुल ठीक, हमें तो एक पाई भी नहीं चाहिए, ये लोग सदा सुखी रहें, अपने वर:घर से जुड़े रहें, हमारे लिए वही बहुत है।

निहालचन्य— (उदास होकर हिचकते हुए) लेकिन सेठ मोतीराम ! फ्लैट मोटर-कार, फर्नीचर, वीडियो, एयर-कण्डीशनर · · · नहीं-नहीं मुझमें इतनी हिम्मत नहीं है !

मोतीराम— तुम में हिम्मत नहीं है तो क्या मुझ में है जो उसे और अधिक पढ़ाई के लिए अमरीका भेज सकूंगा ।

हरीश— (झट पीछे से कूदकर सामने आकर) क्या राकेश शादी के बाद अमरीका पढ़ने जायेगा ?

मोतीराम— तुम ही पूछ लो । वही जिद कर रहा है । मैंने तो उसे साफ-साफ कह दिया है कि मेरे पास इतना धन नहीं है, जो तुम्हें पढ़ने के लिए लिए विलायत भेज सकूं । हां, ऐसा ससुर ढूंढ़ लो जो न सिर्फ तुम्हें पढ़ने के लिए अमरीका भेजे, बल्कि जर्मनी और जापान में ट्रेनिंग भी दिलवाये ।

हरीश— लेकिन विलायत तो लड़के डाक्टरी और इन्जीनियरी पढ़ने जाते हैं । राकेश तो बी. काम. पास है । तुम कौनसा कोर्स पास करने के लिए अमरीका जाना चाहते हो, राकेश ?

राकेश— बिजिनेस मैनेजमेन्ट का !

मोतीराम— हां यही कोर्स बिजिनेस मैनेजमेन्ट का । धन्धा कैसे चलाना चाहिये··· जल्दी से नोट कैसे दुगने करने चाहिये · · · ।

हरीश— पर अंकल यह जल्दी से नोट दुगने करने की विद्या तो आप उसे अपनी गद्दी पर बैठा कर भी सिखा सकते हैं । हमारे देश के व्यापारी भाई तो इसमें वर्ल्ड चैम्पियन हैं । डालडा घी में गाय की चर्बी कैसे मिलानी चाहिये; दाढ़ी-बाल बढ़ाकर ब्रह्मचारी कहलवाकर, गैर कानूनी तौर से बन्दूकें कैसे बनाई जायें, झूठे-सच्चे इम्पोर्ट लायसेन्स लेकर, ब्लैक में कैसे बेचे जायें ! सुना है अंकल ! इस साल आपने भी बहुत पैसा कमाया है ?

मोतीराम— (नाराज होकर) हां पैसा बनाया है, अपनी बुद्धि से, अपने मेल-जोल से । तुम्हें ईर्ष्या होती है तो जाकर तुम भी बनाओ ।

निहालचन्द— (हाथ जोड़कर) लेकिन सेठ साहब, मुझ में राकेश को न अमरीका भेजकर पढ़ाने की सामर्थ्य है और न ही फ्लैट लेकर देने की ।

मोतीराम— (झुंझलाकर) अरे तुम तो भावुक हो गये । बार-बार यह एक ही बेसुरा राग अलाप रहे हो । अरे भाई, सामर्थ्य इन्सान में होती है क्या ? समर्थ तो ईश्वर होता है । जो अपने आप ही आकर कन्याओं

के कार्य सिद्ध करता है । 'करण करावन वाला आप ही आप ।' तुम सिर्फ मन पक्का कर लो ! कहो भूलेलाल ! (निहालचन्द मानो फटी-फटी आंखों से शून्य में कुछ देख रहा है ।)

मोतीराम— (उसे झिंझोरते हुए) मुंह में मूंग पड़ गए हैं क्या ? मैंने क्या कहा ? कहो भूलेलाल ! भगवान का नाम लेने से भी डरते हो क्या ? आओ, मैं तुम्हें बाहर अकेले में समझाता हूँ ।
(मोतीराम निहालचन्द को बांह से खींचते हुए बाहर ले जाना चाहता है ।)

निहालचन्द— (बांह छुड़ाते हुए) नहीं श्रीमान, नहीं ! मुझे क्षमा कीजिये । मुझ में इतना दहेज देने की शक्ति नहीं है ।

मोतीराम— (फिर उसकी बांह पकड़ते हुए) फिर दहेज जैसा गंदा शब्द मुंह पर लाते हो मैंने तुम्हें कहा न कि मैं दहेज के सख्त खिलाफ हूँ । सिन्ध से पक्का कांग्रेसी रहा हूँ । तुम बाहर तो आओ !
(मोतीराम खींचकर निहालचन्द को अपने साथ बाहर ले जाता है । हरांश भी उनके पीछे-पीछे चला जाता है ।)

कला— (खड़ी होकर पार्वती से) आईए, मैं आपको अपना घर दिखाऊँ]

पार्वती— (उठते हुए) अब हम चलें देर हो गई है ।

कला— ऐसे कैसे होगा ? रोज़-रोज़ थोड़े ही आते हैं ।
(कला पार्वती का हाथ पकड़कर उसे खींचती हुई अपने साथ घर के अन्दर ले जाती है । पिंकी वहीं जमकर खड़ी है । निर्णय नहीं कर पाती कि अन्दर जाये या बाहर । आखिर वह वहीं सोफा के पीछे छिपकर बैठ जाती है । निम्मी और राकेश कमरे में अब अकेले दिखाई देते हैं ।)

राकेश— (निम्मी से) हम दोनों एक-दूसरे के लाईफ-पार्टनर बनें, अच्छा है उससे पहले एक-दूसरे के विचार जान लें । आखिर सारी जिन्दगी एक-दूसरे के साथ रहना है, एक ही घर में । तुम्हारा क्या विचार है ?

निम्मी— अच्छा विचार है ।

राकेश— मेरा नाम राकेश मोतीराम चन्दनाणी ।

निम्मी— निर्मला निहालचन्द बालाणी ।

राकेश— मेरी हॉबीज़, क्रिकेट, फुटबाल, टेनिस, पिंग पोलो....

निम्मी— (आश्चर्य से) क्या तुम ये सब खेल खेलते हो ?

राकेश— ओ... नो ! मै इन खेलों की रेडियो, टी. वी. पर कमेन्ट्री सुनता हूँ (कान पर ट्रान्जिस्टर रखने के अन्दाज में) कमेन्ट्री ।

निम्मी— मैंने सुना है कि तुम एक खेल में बहुत होशियार हो ?

राकेश— कौन से खेल की बात कर रही हो ?

निम्मी— रास्ते जाती लड़कियों के साथ मस्ती करने वाले खेल में ।

राकेश— (ठहाका लगाकर) 'यू मीन ईब्ज टीजिंग' हा···हा....हा···यह तो हमारा नेशनल यानी राष्ट्रीय खेल है । कृष्ण भी तो गोपियों के साथ मस्ती करता था । हम उसी के तो पद-चिह्नों पर चल रहे हैं, इन हिज़ फूट स्टेप्स, तुम्हारी क्या हॉबीज हैं ?

निम्मी— चित्रकारी और संगीत । लेकिन मैं इनकी कमेन्ट्री नहीं सुनती । खुद भी नाचती हूँ (कथक नृत्य के तीन फेरे लगाकर) और गाती भी हूँ । (सुर में गाते हुए 'बाजूबन्द खुल-खुल जाय ')

राकेश— (ताली बजाकर) वाह · · · वाह ! बहुत अच्छा ।

निम्मी— पसन्द आया मेरा नाच-गाना ? जब भी तुम्हारे दोस्त घर आयेंगे, तो उन्हें न सिर्फ अच्छा खाना खिला सकूंगी बल्कि नाच-गाकर उनका मन भी बहला सकूंगी । मैं इस विषय में बिलकुल माडर्न हूँ ।

राकेश— नहीं-नहीं ! कहीं ऐसी निर्लज्जता मत दिखाना । स्त्रियों का दूसरे मर्दों के सामने नाचना मुझे बिलकुल पसन्द नहीं है । उन्हें सिर्फ अपने पति के इशारे पर ही नाचना चाहिये ।

निम्मी— तुमने उस्ताद बड़े गुलाम अली खां, पण्डित ओंकार नाथ ठाकुर, भीमसेन जोशी, शान्ति हीरानन्द, किशोरी अमोषकर का संगीत सुना है ?

राकेश— इन उस्तादों की आ ऽऽऽऽ···सुनकर अपना दिमाग खराब करना है ! अपने को तो किशोर कुमार पसन्द है, बहुत पसन्द है । (बन्दर की तरह कमर लचकाकर गाता है) रूप तेरा मस्ताना···प्यार मेरा दीवाना····भूल कोई हम से न हो जाये····ईऽऽ···ईऽऽ···

निम्मी— (कानों पर हाथ रखकर) बस-बस, बन्द करो यह बेहूदा गाना !

राकेश— डार्लिंग आई लाईक यू····तुम हर तरह से मेरे योग्य हो । स्मार्ट, ब्यूटीफुल, टाल (अपने कद से निम्मी का कद नापते हुए) कानवेन्ट

एज्यूकेटेड, इंगलिश फटाफट स्पीकिंग (राकेश निम्मी के चौगिर्द घूमकर उसकी बाहें और टांगें देखते हुए) यू विल बी एन असैट फार माई कैरियर ! मेरा प्रमोशन फटाफट होगा। क्लब में, सोसायटी में हर एक मुझ से ईर्ष्या करेगा।

(उसे अपने शरीर का निरीक्षण करते हुए देखकर अपने दांत दिखाती है)

राकेश— क्यों, मुझे अपने दांत क्यों दिखा रही हो ?

निम्मी— गिनकर देख लो, बत्तीसों साबुत हैं।

राकेश— (दांत गिनते हुए) एक-दो-तीन····तीस इक्कत्तीस····बत्तीस····पास बिलकुल पास ! आज तक जितनी भी लड़कियां देखीं, सौ-डेढ़ सौ तो जरूर देखी होंगी, हर एक में कोई न कोई डिफेक्ट तो था ही। कोई काली थी तो कोई ठिगनी। कोई भैंस सी मोटी थी। किसी की एक आंख बन्द थी तो किसी की दोनों। पर तुम परफैक्ट बिलकुल परफैक्ट टेलर मेड फार माई रिक्वायरमेन्ट। आईल मेरी यू। मैं तुम से शादी करने को तैयार हूँ।

निम्मी— मिस्टर राकेश मोतीराम चन्दनाणी।

राकेश— यैस, मिस निम्मी निहालचन्द बालाणी।

निम्मी— आइ रिफ्यूज़ टु मैरी यू ! मैं तुम से शादी करने से इन्कार करती हूँ।

राकेश— (मुंह फाड़कर) क्या ?

निम्मी— हां, फेल !

राकेश— कौन ?

निम्मी— तुम फेल !

राकेश— मैं फेल ! तुम्हारा दिमाग तो खराब नहीं हुआ है ? मुझ से शादी करने के लिए सैकड़ों लड़कियां तैयार हैं।

निम्मी— वे तुम जैसी ही बेवकूफ लड़कियां होंगी।

राकेश— उनके मां-बाप भी बेवकूफ हैं जो मुझे लाख-लाख रुपया, फ्लैट, कार देने के लिए आतुर हैं ?

निम्मी— लाख-लाख रुपया देने वालों की बेटियाँ, तुम्हारे पिता के मिलावटी माल की तरह ही मिलावटी होंगी।

राकेश— मिलावटी ?

निम्मी— एडल्टरेटेड !

राकेश— एडल्टरेटेड ?

निम्मी— हां, तुम भी एक लाख रुपया, फ्लैट और कार लेकर, जाकर सीमेन्ट में मिट्टी मिलाने वाले ठेकेदारों, घी में चर्बी मिलाने वालों की मिलावटी लड़कियों से शादी करो।

राकेश— निम्मी !

निम्मी— गुड नाईट मिस्टर राकेश कुमार !

राकेश— मेरी बात तो सुनो।

निम्मी— गुड बाई।

राकेश— तुम मेरा मन दुखा रही हो यू आर हर्टिंग माइ फीलिंग्स, मैं तुम से प्यार करता हूँ, आइ लव यू !

निम्मी— छी ! छी !! छी !!! अपनी जबान पर प्यार का नाम मत लाओ, प्यार जैसे पवित्र नाम को गंदा मत करो ! तुम्हें प्यार के अर्थ का भी पता है ? तुम प्यार करते हो लड़कियों की गोरी चमड़ी से, उनकी लम्बाई-चौड़ाई से, स्मार्ट ब्यूटीफुल बाडी से, फटाफट अंग्रेजी से, कानवेन्ट एज्यूकेशन से। तुम्हें ऐसी ही वाईफ की तलाश है, जो तुम्हें कैरियर बनाने में मदद करे, तुम्हारा स्टेटस सिम्बल बने। मैं ऐसी योग्य कामधेनु गाय कभी नहीं बन सकूंगी। ऐ मिस्टर ! अब तुम यहां से चलते बनो····फूटो !

राकेश— (गरजते हुए, बाहें चढ़ाते हुए) निम्मी ! तुम मेरी इन्सल्ट कर रही हो।

निम्मी— इन्सल्ट तो अभी की नहीं है। उसका भी शौक है तो लो ! मुझे नहीं करनी है तुम जैसे बूढ़े बासी बैंगनमल से शादी, जो अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश करने की बजाय अभी तक अपने बाप की पैंट के अन्दर छिपा बैठा है। अरे मिस्टर, शादी करनी है तो पहले मर्द बनकर दिखाओ मर्द ! (एक क्षण बाद) (मुंह फेर कर कसैला करते हुए थूककर····)नामर्द कहीं का !

(राकेश वहीं जड़ सा हो गया है।)

(पिंकी जो अभी तक सोफा के पीछे छिपकर बैठी थी, अब बाहर निकलकर ताली बजाती हैं और सोफा पर चढ़कर खड़ी हो जाती है।

पिंकी— अभी तक खड़े हो, सुना नहीं ? (ट्रैफिक पुलिस मैन की तरह बाहर के दरवाजे की तरफ संकेत करते हुए) चलो, फूटो !

(तीनों व्यक्ति इसी मुद्रा में जहां के तहां जड़ हो जाते हैं। साइक्लोरमा पर्दे पर संध्या जैसा प्रकाश धीरे-धीरे मद्धिम होने लगता है।)

(वायलिन का दर्द भरा संगीत····)

[पर्दा गिरता]

अंधेरे साये

भगवान अटलाणी

पात्र—

काका —	आयु अनुमानतः	60 वर्ष
काकी —	,, ,,	57 वर्ष
पापा —	,, ,,	55 वर्ष (काका का छोटा भाई)
कुमार —	,, ,,	25 वर्ष (पापा का बेटा)

(ड्राईंग रूम का दृश्य । कुमार का प्रवेश ।)

पापा— छोड़ आए डाक्टर को ?

कुमार—हाँ पापा ।

पापा— क्या कह रहा था ?

कुमार—यही कि चिन्ता करने की कोई बात नहीं है ।

पापा— पर अम्मां तो बहुत घबराई हुई हैं ।

कुमार—घबराने की तो अम्मा की पुरानी आदत है, पापा । पहले भी दो बार घबरा कर अम्मां अपने बेटे-बेटियों को बुलवा चुकी हैं ।

पापा— पर इस बार अम्मां को कुछ हो गया तो…

कुमार—(बीच ही में बात काटकर) कुछ नहीं होगा । डाक्टर ने साफ कहा है कि कोई खास बात नहीं है । दो-चार दिनों में ठीक हो जायेंगी ।

पापा— तब भी कुमार, तुम उन्हें तार दे ही दो ।

कुमार—आप बुरा न मानें तो एक बात कहूँ, पापा ।

पापा— कहो ।

कुमार—जिन्दा रहना आजकल इतना महँगा हो गया है कि किसी की सनक या जिद के कारण हजारों रुपये फूँक देने में कोई समझदारी नहीं है ।

पापा— किसके फूँके जायेंगे हजारों रुपये ? हमारे ?

कुमार—नहीं पापा, इस घर में तो दो कमाने वाले और केवल पाँच खाने वाले हैं । हमारा कुछ खर्च भी हुआ तो चल सकता है ।

पापा—तो फिर तुम किसका खर्च बचाना चाहते हो ?

कुमार—अम्मां की बेकार जिद है और आप, बूआजी और काका दोनों को बुलाना चाहते हैं।

पापा— इसलिए ?

कुमार—जरूरी नहीं है कि बूआजी और काका के पास भी हमारी तरह फालतू पैसा हो। बैंगलोर और बम्बई से जयपुर आने के लिए क्या कम पैसा चाहिए ?

पापा— नहीं कुमार, मेरी बहिन और भाई दोनों में से कोई भी इतना खस्ता हाल नहीं है जो अपनी मां को देखने के लिए न आ सकें।

कुमार—खस्ता-हाल होना अलग बात है पापा, पर किसी के पास फालतू रुपया नहीं होता है।

पापा— देखो कुमार, सवाल अम्मां की इच्छा का है। ऐसे अवसरों पर रुपयों को नहीं देखा जाता है।

कुमार—क्यों नहीं देखा जाता है ?

पापा— अब तुम मुझ से साफ-साफ ही कहलवाना चाहते हो तो सुनो। ईश्वर न करे, कल अम्मा को कुछ हो गया तो सब हमें ही कहेंगे।

कुमार—क्या कहेंगे ?

पापा— कहेंगे कि मां अपने बच्चों का मुंह देखने की इच्छा मन में ही लेकर चली गई।

कुमार—पापा, पहली बात तो ऐसी स्थिति आयेगी नहीं, और अगर आ भी गई तो लोगों के कहने से क्या फर्क पड़ता है ?

पापा— फर्क क्यों नहीं पड़ता ? आखिर हमें तो यहीं रहना है, इसी समाज में।

कुमार—जिन्दगी को दुखी करना ही अगर समाज में रहने की शर्त है तो आपकी इच्छा पापा। मैं तार देकर आता हूं। पर निजी रूप से मैं अब भी दिखावे के खिलाफ हूं।

पापा—(थोड़ा मुस्कराकर) कोई बात नहीं। मेरे कहने से ही तुम तार दे दो।

(मंच पर अंधेरा/प्रकाश/वही ड्राइंग रूम का दृश्य।)

कुमार—पापा, काका का तार आया है।

पापा— क्या लिखा है ?

कुमार—अभी 'मेल' से आ रहे हैं।

पापा— कौन-कौन आ रहा है, कुछ लिखा है ?

कुमार—हाँ, काका और काकी दोनों आ रहे हैं ।

पापा— न जाने देवी का कोई समाचार क्यों नहीं आया ।

कुमार—हां, बूआजी का कोई समाचार नहीं आया । मेरे विचार से वे लोग सीधे ही आ पहुँचेंगे । पिछली बार भी तो वे ऐसे ही आये थे ।

पापा— चलो, ठीक है । तुम स्टेशन पर जा रहे हो न ?

कुमार—हाँ, जा रहा हूँ ।

पापा— पहले फोन करके पूछ लो, कहीं गाड़ी लेट तो नहीं है ?

कुमार—ठीक है । पर पहले अम्मा को तो यह खुशखबरी सुना दूँ ।

पापा— (मज़ाक करते हुए) नहीं, अम्मां को मैं ही बता देता हूँ । तुम फिर कोई उल्टी-सीधी बात कहोगे अम्मां से ।

कुमार—अब उल्टी-सीधी बात कहने को बचा ही क्या है, पापा ? काका और काकी आ रहे हैं । बूआजी भी आती ही होंगी । अम्मा पहले भी खतरे से बाहर थीं, अब भी खतरे से बाहर हैं । कहने-सुनने से अगर कोई लाभ नहीं है तो बेकार में क्या कहना ?

पापा— (उसी तरह से) न सही लाभ, तुम जाकर भैया को ले आओ । अम्मां को मैं ही बता दूँगा ।

कुमार—ठीक है ।

(जाने लगता है ।)

पापा— और सुनो !

कुमार—(मुंह घुमाकर) कहिये ।

पापा— तुम अपना ओवर कोट पहनकर जाना । ठण्ड कुछ अधिक है आज ।

कुमार—नहीं पापा, इतनी ठण्ड नहीं है जो ओवर कोट पहना जाये ।

पापा— (प्यार से डांटते हुए) तुम से जो कहा जाये वहीं करो । हम सर्दी से ठिठुर रहे हैं और इस लाट साहब के लिए ठण्ड ही नहीं है ।

कुमार—(हताश होकर) ठीक है, पापा । जैसा आपको ठीक लगे । पहन लेता हूँ ओवर कोट ।

(अंधेरा / प्रकाश / प्लेट फार्म की हलचल / काका और काकी टीन की एक सन्दूक लिए हुए खड़े हैं । काका आधी बाहों वाली बुशर्ट पर जैकेट और काकी एक सूती शॉल ओढ़े हैं । कुमार आता है । यह ओवर कोट और गर्म टोपी पहने हुए है ।

कुमार—(दोनों के पैर छूते हुए) लगता है, आज गाड़ी कुछ जल्दी आ गई है।

काका— हो सकता है। तार मिल गया था न ?

कुमार—हाँ।

काका—कब ?

कुमार—अभी बारह बजे।

काका—बहुत देर से मिला है। हमने तो तार कल सवेरे ही दे दिया था।

कुमार—आजकल काका, तार मिल जाना ही बहुत है।

काकी—अम्मां अब कैसी हैं ?

कुमार—ठीक है, चिन्ता की कोई बात नहीं है।

काकी—तार में तो तुमने कुछ और ही लिखा था। क्या हुआ था अम्मा को ?

कुमार—वही पुरानी तकलीफ।

काका—दम घुटने वाली ?

कुमार—हाँ।

काका—डाक्टर क्या कहते हैं ?

कुमार—कहते हैं, डर की कोई बात नहीं है। जल्दी ही ठीक हो जायेंगी।

काकी—यह बात डाक्टर अब कह रहे हैं या पहले भी कह रहे थे ?

कुमार—(हंसकर टालते हुए) आइए, घर चलें। वहीं चलकर बातें करते हैं।

काका—(बात अच्छी न लगने पर, टालने के विचार से जल्दी-जल्दी) हाँ.........हाँ, चलो। घर चलकर ही बातें करते हैं।

कुमार—(सन्दूक की तरफ झुकते हुए) सामान तो बस यही है न ?

काकी—हाँ, यही है। जल्दी में और कुछ तो हाथ लगा नहीं। एक ही सन्दूक में दो-चार कपड़े डालकर झट से निकल पड़े।

कुमार—(सन्दूक छोड़कर सीधे खड़े होते हुए, व्यंग्य से) जल्दी में शायद यह भी याद नहीं रहा होगा आप लोगों को, कि इन दिनों जयपुर में ठण्ड होती है।

काकी—(उदास होकर) हां कुमार, तुम तो जानते हो, बम्बई में तो जैसे ठण्ड है ही नहीं।

कुमार—अब आप भी कहेंगे काका, कि आपको पता ही नहीं था कि जयपुर में इतनी ज्यादा ठण्ड होती है।

काका—नहीं, यह बात नहीं है, कुमार। बस थोड़ा सा जल्दी में थे न, इसलिए....

कुमार—(बीच ही में) छोड़िए काका। बताइये, रास्ते में आप लोगों को कोई कष्ट तो नहीं हुआ ?

काकी—नहीं, कष्ट क्यों होगा ?

कुमार—आप दोनों बहुत थके-थके से लग रहे हैं, इसलिये पूछा कि गाड़ी में जगह-वगह तो मिल गई थी न ?

काकी—(मानो बात बनाते हुए) कुली को दस रुपये देकर दो सीटें ले ली थी अहमदाबाद में। आराम से आये, बिलकुल आराम से आये।

कुमार—(हंसकर सन्दूक उठाते हुए) कोई बात नहीं है। नहीं भी आये होंगे तो अब हो जायेगा आराम।

(रवाना होते हैं। अंधेरा/प्रकाश/ड्राइंग रूम का दृश्य)।

कुमार—(गुनगुनाते हुए प्रवेश करता है, काकी को देखकर रुक जाता है) अरे काकी, किस सोच में डूबी हैं ?

काकी—(चौंककर) कुछ नहीं। कुछ भी तो नहीं। आ बैठ।

कुमार—नहीं बताना चाहती हैं तो छोड़िए। इस मामले में मैं आप से ज़िद नहीं करूँगा, क्योंकि मुझे आप से एक और बात पूछनी है।

काकी—पूछ बेटे, क्या पूछना चाहता है ?

कुमार—आप सही-सही बतायेंगी ?

काकी—बात पूछी नहीं, सही-गलत की चिन्ता पहले लग गई। बात तो बता।

कुमार—काकी, अब क्या मैं बहुत बड़ा हो गया हूँ ?

काकी—बड़ा तो तू जरूर हो गया है पर बहुत बड़ा होने वाली बात समझ में नहीं आई, कुमार।

कुमार—बहुत बड़ा होने वाली बात छोड़िए। बड़ा हो गया हूँ यह बात तो आप भी मानती हैं। अब यह बताइए काकी, कि क्या आपके लिए भी मैं बड़ा हो गया हूं ?

काकी—(बात समझ कर) अच्छा ! नहीं रे ! मां-बाप के लिए भी कभी बच्चे भला बड़े होते हैं ? तू बूढ़ा भी हो जायेगा न, तब भी हमारे लिए बच्चा ही रहेगा।

कुमार—(भावुकता से) सच बताइये काकी, मेरा बच्चे वाला रूप कभी याद आता है आपको ? कभी याद आता है आपको कि बचपन के पाँच साल मैं आपका और काका का बेटा रहा हूँ, पापा का नहीं।

काकी—(नहीं समझते हुए) हाँ, याद क्यों नहीं आयेगा ?

कुमार—तब जितना प्यार आपने और काका ने मुझे दिया था, मैं कभी भूल नहीं

सकूंगा। सच्चाई तो यह है कि आज भी बचपन के जुड़ाव के कारण मैं पापा के निकट कम और आपके निकट अधिक समझता हूँ आपने आपको।

काकी—अरे, तो क्या मैं यह नहीं जानती कि रवि, सीमा और मीना से भी पहले तू हमारा बेटा है। पर तू साफ बात क्यों नहीं करता, कह तू क्या कहना चाहता है?

कुमार—इस बार आप श्रीखण्ड क्यों नहीं लाये मेरे लिए?

काकी—(चकित होकर) "श्रीखण्ड····श्रीखण्ड····हूं SSS।"

कुमार—पिछली बार जब अम्मां बीमार हुई थी और आप और काका जयपुर आये थे, उस बात को साल भर ही तो हुआ होगा।

काकी—हां एक साल ही हुआ है।

कुमार—पिछली बार तो आप मेरे लिए श्रीखण्ड लाना नहीं भूले थे? फिर इस बार क्यों नहीं लाये?

काकी—सच्ची बात तो यह है कुमार, कि जल्दी में हमारा ध्यान दूसरी किसी बात की तरफ गया ही नहीं!

कुमार—अम्मां की बीमारी पर पिछली बार जब जयपुर आए थे, तो क्या बहुत फुर्सत में थे आप लोग?

काकी—ध्यान नहीं रहा इस बार!

कुमार—अच्छा, पिछले साल तक जब भी कोई जयपुर आने वाला आपको मिलता था तो आप मेरे लिए श्रीखण्ड भेजना नहीं भूलते थे। तब क्या श्रीखण्ड लेने के लिए दस-बीस दिन का समय मिल जाता था, आपको?

काकी—(रोने को रोकने का प्रयास करती हुई) ऐसी बातें पूछना, क्या बहुत जरूरी है तेरे लिए? तू इतना भी नहीं समझता क्या कि····(रोती है)।

कुमार—(व्याकुलता से) काकी! यह क्या? आप रो रही हैं? ऐसी तो कोई बात मैंने नहीं कही, जो आप····।

काकी—(रोते-रोते ही बीच में बात काट कर) मुझे अकेला छोड़दे कुमार। भगवा के लिए अकेला छोड़ दे।

(अंधेरा····प्रकाश····प्रकाश के प्रयोग से पीछे लहराता तालाब। कुमार और काका बैठे हैं।)

काका—तो यह है तुम्हारा ताल कटोरा!

कुमार—हाँ, शहर के बीच में ऐसी प्राकृतिक सुन्दरता बहुत कम देखने को मिलती है काका।

काका—ऐसा क्या है यहाँ ?

कुमार—सन्ध्या से आंख मिचौनी करता अंधेरा, यहां ऐसा लगता है काका, मानों धीरे-धीरे तालकटोरे में छिपने का स्थान ढूँढ़ रहा है।

काका—वर्णन करने की कला में तो तुम माहिर हो कुमार।

कुमार—मैं विश्वास के साथ कह सकता हूं काका, किले पर जाती हुई सीढ़ियों के सहारे लगी बिजली के बल्बों की झालर की तालाब में पड़ती परछाईं किसी को भी आकर्षित कर सकती है।

काका—इस तरफ क्या है ?

कुमार—इस तरफ मन्दिर है। पर शाम के समय मुझे तालकटोरे का दृश्य जितना सुख देता है, न जाने क्यों, उतना सुख यह मन्दिर नहीं देता।

काका—(चिन्ता से) तुम नास्तिक तो नहीं हो गये हो, कुमार ?

कुमार—नहीं काका, नास्तिक-वास्तिक तो नहीं हुआ हूं, पर तालकटोरे पर बिखरी शान्ति मुझे और किसी भी स्थान पर नहीं मिलती है। (अंगुली से संकेत करते हुए) उस तरफ देखिए, काका।

काका—(देखते हुए) दृश्य तो सचमुच बहुत लुभावना है। (ऊपर संकेत करके) और वह ऊपर क्या है ?

कुमार—वही किला, जिसके बारे में अभी थोड़ी देर पहले बताया था। काका, हिंडोले में झूलता तालकटोरा। वीरान सन्नाटा। शान्ति। स्वर्ग। ध्यान और समाधि लगाना, इसे ही तो कहते होंगे। (बात कहते-कहते स्वयं में डूब जाता है। टेप रेकार्डर से लहरों की कल-कल की आवाज़। अचानक दूर से आती आरती की हल्की सी आवाज़ उभरती है, अन्यथा शान्ति।)

कुमार—(धीरे से) कैसा लग रहा है, काका ?

काका—(मद्धिम स्वर में) अच्छा, बहुत अच्छा।

कुमार—एक बात बताइए, काका।

काका—पूछो।

कुमार—इस वातावरण में बैठकर दुनियादारी बेकार नहीं लगती ?

काका—(सोचता हुआ) शायद लगती है। पर दुनिया से भागकर कोई जायेगा भी कहां ?

कुमार—मैं दुनिया से भागने की बात नहीं कहता। पर कड़वी सच्चाइयों का

सताया हुआ आदमी इस वातावरण में पहुँच कर क्या अपने आपको परेशानियों से मुक्त महसूस नहीं करेगा ?

काका—(दर्द से मुस्कराकर) हां करेगा, पर शर्त यह है कि उसे उसकी परेशानियां याद न दिलाई जायें ।

कुमार—काका, बुरा मत मानियेगा, पर जब से आप यहाँ आए हैं, मुझे ऐसा लग रहा है, कि परेशानियाँ आपका पीछा कर रही हैं । ....आप मुझे वह नहीं लगते जो पहले हुआ करते थे ।

काका—(लम्बी सांस लेकर) जिन्दगी इन्सान को कई बार ऐसी कलाबाजियां खिलाती है कुमार, कि उसका दिशा ज्ञान खत्म हो जाता है ।

कुमार—आप मुझे या पापा को अपना कुछ नहीं समझते क्या, काका ?

काका—समझता क्यों नहीं हूँ ?

कुमार—फिर अपनी परेशानी या दुख आप हमें क्यों नहीं बताते ?

काका—छोड़ बेटे, दुनिया में सब लोग अपने ही झंझटों में फँसे हुए हैं ।

कुमार—नहीं काका, ऐसी बात नहीं है । यहाँ पापा और मैं दोनों कमाने वाले हैं और आपके सामने पांच साल की मीना की पढ़ाई से लेकर जवान सीमा और बेरोजगार रवि की चिन्ता है । आखिर आप खुलकर बात क्यों नहीं करते ?

काका—(थोड़ा सा हँसकर) नहीं कुमार । मेरे सामने कोई भी समस्या नहीं है । यूँ ही कुछ भावुक हो गया था ।

कुमार—आपको आपत्ति न हो तो पूछ सकता हूँ, कि इन दिनों आपका काम कैसा चल रहा है ?

काका—(टालते हुए) ठीक ही है ।

कुमार—ठीक यानी क्या ? पहले जैसा, पहले से खराब या पहले से अच्छा ?

काका—(हो....हो....कर नकली हँसी हँसते हुए) ठीक यानी ठीक यानी ठीक-ठाक ।

कुमार—(गम्भीरता से) आप मेरी बात को इतनी सरलता से नहीं उड़ा सकेंगे, काका ।

काका—(झेंपते हुए) कहाँ उड़ा रहा हूँ तुम्हारी बात को ?

कुमार—नहीं उड़ा रहे हैं तो बताइए, रवि के क्या हाल हैं ? कुछ मदद-वदद करता है आपकी ?

काका—तुम तो जानते हो कुमार। प्लास्टिक के थैले बनाकर दुकानों पर बेचना कितनी मेहनत का काम है।

कुमार—सचमुच मेहनत का काम है। आप भी तो सारी उम्र यही काम करके सब को पालते रहे हैं। फिर आपके बुढ़ापे में रवि क्यों नहीं कर सकता यह काम ?

काका—इस काम में वैसे भी उसका मन कम ही लगता है फिर इस साल उसे बी.ए. की परीक्षा भी तो देनी है।

कुमार—इस साल ही क्यों ? पिछले साल भी उसे बी.ए. की परीक्षा देनी थी। उससे पिछले साल भी उसे बी.ए. की परीक्षा देनी थी। आखिर कब तक चलेगा ऐसे ?

काका—(बुझे-बुझे स्वर में) चल ही रहा है।

कुमार—मुझे तो लगता है काका, कि रवि गलत रास्ते पर चला गया है और आप उसके साथ कोई सख्ती नहीं करते।

काका—कैसी सख्ती करें ? (ठण्डी सांस लेकर) चलो, चलें।

कुमार—यह, मेरी बात का जवाब नहीं है, काका।

काका—(उठते हुए) चल कुमार। मैं थक गया हूँ।

(कुमार उठता है। अंधेरा। प्रकाश। ड्राइंग रूम का दृश्य। काकी बैठी है। कुमार आता है।)

कुमार—क्या कर रही हैं काकी ?

काकी—यूँही बैठी हूँ।

कुमार—काका बाहर गए हैं क्या ?

काकी—नहीं, अन्दर सो रहे हैं।

कुमार—आपने खाना खा लिया ?

काकी—हाँ।

कुमार—आप नहीं सो रही हैं क्या ?

काकी—क्यों, कोई काम है ?

कुमार—यूँही पूछ रहा हूँ।

काकी—मुझे दोपहर में सोने की आदत नहीं है। कोई काम हो तो कह।

कुमार—काम तो नहीं। बस, आप से गप-शप करने का मन है। आप तो जब से आई हैं, ऐसे कटी-कटी सी रहती हैं, मानों मैं आपका कुछ लगता ही नहीं।

काकी—नहीं कुमार, ऐसी कोई बात नहीं है।

कुमार—मैं ठीक कह रहा हूँ, काकी। और आप ही नहीं, काका भी मुझ से दूर-दूर भागते रहते हैं।

काकी—तुझ से भला हम दूर क्यों भागेंगे? क्या तू हमारा कोई काम बिगाड़ देगा?

कुमार—नहीं, कुछ बिगाड़े जाने का भय तो आप दोनों में से किसी को भी नहीं है। पर एक दूसरा भय जरूर है आपको।

काकी—(हलका सा मुस्कराकर) कैसा भय है, बता तो।

कुमार—यही, कि आपके और काका के दिमाग पर जो बोझ है, उसके कारण की जानकारी कहीं मुझे न हो जाये।

काकी—(नकली हँसी हँसते हुए) हमारे दिमाग पर भला क्या बोझ हो सकता है? कभी-कभी तू भी बड़ी अजीब बातें करता है, कुमार।

कुमार—अजीब बातें मैं नहीं करता हूँ काकी। अजीब बातें आप करती हैं। उस, दिन भला मैंने ऐसी क्या बात कही थी श्रीखण्ड के लिए जो आप रोने लगी थीं?

काकी—(बनने का प्रयास करते हुए) सच बात तो यह है कुमार, कि उस दिन तेरी बातें सुनकर मुझे अपनी याददाश्त पर इतना गुस्सा आया कि सहसा रोना आ गया। और कुछ नहीं था।

कुमार—कल शाम को मैं काका को तालकटोरा घुमाने ले गया था। बातचीत में जब मैंने काका से घर के हाल-चाल पूछे तो साफ टाल गए। कुछ भी नहीं बताया।

काकी—तेरे काका की बात, तेरे काका जानें। मैं तो अपने लिए कह सकती हूँ कि मेरे मन में कुछ भी नहीं है।

(पापा का प्रवेश)

पापा—(दूर से आते-आते) क्या बात नहीं है आपके मन में भाभी, कुछ हमें भी तो बताइए।

काकी—कुछ नहीं देवरजी, कुमार के साथ इधर-उधर की गप-शप हो रही थी। अब तुम आए हो तो कुछ काम की बातें कर लें।

पापा—गपशप लगानी हो तो कुमार, कोई काम हो तो हम। क्यों भाभी?

काकी—कुमार के साथ, काम की क्या बात कर सकते हैं देवरजी? कुमार कितना भी बड़ा क्यों न हो जाये, हमारे सामने तो बच्चा ही रहेगा। तुम यही बात कह रहे थे न कुमार?

कुमार—मैं तो कह रहा था काकी, पर आप भी कहती हैं या नहीं ?

काकी—कहैतो दिया मैंने भी। (तीनों मिलकर हँसते हैं)

पापा—हाँ भाभी, क्या बात कह रही थीं मुझ से ?

काकी—देवरजी, हमें यहां आये बहुत दिन हो गये हैं। अब तो अम्मां भी ठीक हैं। वहाँ बच्चे परेशान हो रहे होंगे। अब हमें जाने की इजाजत दो।

पापा—भाभी, आप लोग इतनी दूर से आये हैं, दो चार दिन तो यहां रहना चाहिये। हमारा मन तो भरा ही नहीं अभी।

काकी—नहीं देवर जी, दो चार दिनों की तो कोई बात नहीं है। पर रिजर्वेशन मिलने में भी तो समय लगेगा।

पापा—भाभी····।

कुमार–(बीच में बात काटकर) क्षमा कीजियेगा पापा, आपकी बात काट रहा हूँ। मेरे विचार से काकी ठीक कह रही हैं। वहाँ काका का धन्धा खराब हो रहा होगा।

पापा—(हँसकर) भाभी, यह कुमार भी अजीब है। जो मन में आयेगा झट से मुँह पर ले आयेगा।

कुमार—पापा, मैंने कुछ गलत कहा हो तो बताइये।

काकी—अरे, पापा से क्यों पूछता है ? पूछना हो तो मुझ से पूछ। तू बिलकुल ठीक कह रहा है। अब तू ऐसा कर कि आज ही स्टेशन जाकर जल्दी से जल्दी जिस तारीख में रिजर्वेशन मिले करा ला।

कुमार—काकी, बेवजह लाग-लपेट में मेरा विश्वास नहीं है। इस लिए सदा साफ-साफ दो टूक बात कहता हूं, आपको बुरा तो नहीं लगा न ?

काकी—नहीं कुमार, तूने तो अच्छी बात कही है और अच्छी बात किसी भी अच्छे आदमी को बुरी लग ही नहीं सकती। है न ?

(सब मिलकर हंसते हैं)

पापा—अच्छा भाभी, मैं चलता हूं। अब तो आपका मुझ में कोई काम रहा नहीं है ?

काकी—एक काम और है देवरजी। मेरे पास पचास रुपये की अठन्नियाँ-चवन्नियां हैं। दुकान से बदलकर रुपये ला देना।

पापा—(हँसकर) इतने सिक्के कहाँ से इकट्ठे किए भाभी ?

काकी—बच्चों के लिए मँगवाए थे। यहाँ आई तो लेती आई।

पापा— ठीक है भाभी, दे दीजिए। कमीशन काटकर बाकी रुपये आपको मिल जायेंगे।

(सब मिलकर हंसते हैं। अन्धेरा। प्रकाश। कुमार ड्राइंग-रूम में प्रवेश करता है। उसके हाथ में पत्र है।)

कुमार—(जोर से) काकी ओ काकी।

काकी—(अन्दर से आते हुए) क्या है कुमार? (पास आकर) बोल क्या बात है?

कुमार—सीमा की चिट्ठी आयी है, लीजिये।

काकी—तो मुझे क्यों दे रहा है चिट्ठी? मुझे अन्दर से चश्मा लाना पड़ेगा। तू ही पढ़कर सुना दे।

कुमार—(पत्र खोलकर) सुनिये काकी। लिखा है—पापा-ममी, आप दोनों आराम से जयपुर पहुँच गये होंगे। अम्मां अब ठीक होंगी।

(अचानक नकली गुस्सा दिखाते हुए) यह अच्छा तमाशा है काकी, मेरा नाम ही नहीं है।

काकी—(मुस्कराकर) अरे, पूरी चिट्ठी तो पढ़। पहले ही अपने नाम की लगी है।

कुमार—आप भी अच्छी हैं काकी! सीमा की गलती मानने के बजाय उल्टा मुझे ही डांट दिया, खैर कोई बात नहीं आगे सुनिये।

काकी—(मुस्कराकर) हाँ सुना।

कुमार—लिखती है, ममी, दीवार के कोने में लकड़ी की पट्टी लगाकर आपने जो गुल्लक बनाई थी, आपके जाने के बाद न जाने किसने उसे तोड़कर सारे रुपये निकाल लिए हैं। गुल्लक में एक पैसा भी नहीं है। मैंने रवि से भी पूछा था, पर उसने इनकार कर दिया। समझ में नहीं आता ममी, यह काम किसने किया होगा। (पढ़ना बन्द करके) इसके बाद आप खुद ही पढ़ लीजियेगा। मुझे सिर्फ एक बात बताइये। काकी, क्या पचास रुपयों की अट्ठन्नियां-चवन्नियां आपने सचमुच बच्चों के लिए मंगवाकर रखी थीं?

काकी—(हिचकते हुए) कौन सी अट्ठन्नियां-चवन्नियां?

कुमार—वो ही, जो रुपयों में बदलने के लिए आपने पापा को दी थीं।

काकी—हां, पर यह बात तू क्यों पूछ रहा है?

कुमार—आप अच्छी तरह जानती हैं काकी कि मैं यह बात क्यों पूछ रहा हूँ?

काकी—(बात बदलने का प्रयास करते हुए) इस बात को छोड़, पहले पूरी चिट्ठी तो पढ़कर सुना।

कुमार—नहीं काकी, चिट्ठी तो अब आप खुद ही पढ़ेंगी। पर आपने यह काम ठीक नहीं किया है। (काका को अन्दर आता देखकर) आइये काका, आप बहुत अच्छे वक्त पर आये हैं।

काका—क्यों, क्या हुआ ?

कुमार—काका, प्रश्न पूछने की बारी आपकी नहीं, मेरी है। पहले आप यह चिट्ठ पढ़िए, सीमा ने भेजी है।

(काका चिट्ठी लेकर पढ़ते हैं। ····गहरा सन्नाटा।)

कुमार—बच्चों की गुल्लक में से पैसे चुराकर, मां की बीमारी पर पहुँचना अच्छा लगा आपको ?

काका—(हड़बड़ाकर) यह····यह तू क्या कह रहा है कुमार ?

कुमार—(शान्ति के साथ बात काटते हुए) मैं जानता हूँ काका, आपके पास कोई जवाब नहीं है। सच तो यह है काका, कि आप में सही बात स्वीकार करने की हिम्मत ही नहीं है।

काकी—कौन सी सही बात ?

कुमार—यही कि आपकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है।

काका—कुमार······· !

कुमार—(काटकर) मेरी समझ में नहीं आता काका, कि आप चोरी-चोरी बच्चों की गुल्लक तोड़ सकते हैं पर ऐसे आदमी से मदद नहीं माँग सकते जो अपने आपको आपका बेटा कहता है। आप क्यों नहीं कह सकते मुझे या मेरे पापा से कि आपको पैसों की जरूरत है ? क्यों समझते हैं आप हमें पराया ?

काकी—(गुस्से से) साफ-साफ सुनना चाहते हो न, तो सुनो। हमने सीमा की शादी के लिए दस हजार रुपये इकट्ठे किये थे।

काका—सीमा की मां······· ।

काकी—(बीच ही में) मत रोकिए मुझे, कहने दीजिए। सीमा का एक लड़के से प्यार था, पर जब शादी की बात चली तो उन्होंने दहेज में तीस हजार रुपये की माँग की। हमने तेरे पापा से कर्ज माँगा। तेरे पापा ने सोचा होगा, यहाँ दिया गया पैसा डूब न जाये, सो साफ किनारा कर गये।

कुमार—(विस्मित होते हुए) यह आप क्या कह रही हैं ? पापा···· ?

काकी—(बीच में ही बात काटकर) हाँ, पूछ लेना अपने पापा से। उसके बाद बहुत कोशिश की, पर दस हजार रुपयों में हम कोई भी अच्छा लड़का खरीद नहीं सके।

कुमार—आपने मुझे क्यों नहीं बताया ?

काकी— क्या फायदा ? पिछली बार जब अम्मां की तबियत खराब हुई थी, यह तब की बात है। वापस लौटने के बाद, पेट काटकर, शरीर नंगा रखकर, गर्मी-सर्दी सहकर, हमने लकड़ी की गुल्लक में कुछ बचत की। जिसके लिए सीमा ने लिखा है।

कुमार—पर इस तरह आप कितनी बचत कर सकेंगे ?

काकी— जितनी हो सकेगी, पर यह बचत भी····

(काकी चुप हो जाती है।)

कुमार—मुझे माफ़ कीजिये काकी, मैं आपको गलत समझ रहा था।

काका—गलती तेरी नहीं है बेटे, खोट हमारी किस्मत का है।

कुमार—आपकी किस्मत का कोई खोट नहीं है काका।

(काकी के पैरों पर हाथ रखकर) मुझे आशीर्वाद दीजिये काकी, सीमा की शादी की जिम्मेदारी मैं उठाऊँगा।

काका—तेरी काकी को यह सब नहीं बताना चाहिए था कुमार। तू भावुक मत हो एक सीमा की शादी से क्या होगा ? किस-किस सामा की शादी की जिम्मेदारी लेगा तू ? और लेगा भी तो कब तक ?

कुमार—(दृढ़ता से) मैं एक दहेज बिरोधी संगठन स्थापित करूँगा, काका। मैं खुद बिना दहेज के शादी करूँगा। मुझ जैसे नौजवान उस संगठन के सदस्य बनेंगे। कोई दहेज लेकर शादी करेगा तो हम वहाँ धरना देंगे। जागृति उत्पन्न करके समाज को मजबूर करेंगे इस कोढ़ के धब्बे मिटाने के लिये।

काका—इतना बड़ा काम तू कर सकेगा, कुमार ?

कुमार—आप आशीर्वाद दीजिए काका, फिर देखिए कि अंधेरे साये कैसे लुप्त हो जाते हैं।

(अंधेरा। पर्दा गिरता है।)

एकांकी नाटक-3

दीपक तले अन्धेरा

राम ज्ञानचन्दाणी

पात्र—

1. टेकचन्दाणी	मध्यम श्रेणी का अधिकारी, आयु 50 वर्ष
2. गंगा	वर की मां, आयु 45 वर्ष घुटनों के दर्द से ग्रस्त
3. हेमराज चंचलाणी	वर के पिता, आयु 50 वर्ष

दृश्य—प्रथम ।

समय—शाम के छः बजे ।

(सुन्दर ढंग से सजाया हुआ ड्राइंग-रूम । कमरे में एक तरफ सोफा सैट, सैन्ट्रल टेबल, साइड टेबल, जिस पर फूलदान हैं ।····सामने कोने में टेलीविजन ।····दूसरे कोने में स्टीरियो डैक और कमरे में दूसरी तरफ डाइनिंग टेबल है जिस पर एक सुन्दर टी-सेट रखा हुआ है । खिड़कियों और दरवाजों पर फूलदार पर्दे—अर्थात एक समृद्ध घर का ड्राइंग रूम ।)

(पर्दा खुलने पर यद्यपि सेट पर कोई भी नहीं है पर स्टीरियो डैक पर अंग्रेजी धुन पर सिन्धी राग, भगवन्ती नावाणी की आवाज में सिन्धी डिस्को जोर-जोर से बज रहा है ।····बाहर से घन्टी बजती है ।····दूसरी बार जोर से घन्टी बजने की आवाज और अन्दर के दरवाजे से गंगा, जिसने गाऊन पहना हुआ है, आंखें मसलती हुई आती है ।)

गंगा— आई····आई····ज़रा रुकिये तो सही (घुटनों के दर्द के कारण धीरे-धीरे चलते हुए भी अचानक दर्द अनुभव करते हुए) आग

लगे ! जब तक ये घुटने सीधे हों····तक तक तो जैसे घन्टी पर अंगूठा रखकर खड़े हो जाते हैं····(फिर घन्टी बजती है) आई ! जवानी में तो इतनी उतावली होती है, पर इन्हें तो इस उम्र में भी····एक पल भी ठहरना नहीं आता ·· एक तो यह मुआ राग···आग लगे···· ····आई····आई····(दरवाजा खोलते हुए) आपको तो बिलकुल···· जानते तो हैं कि जब तक घुटने सीधे हों···तब तक चल सकने में कठिनाई होती है····ओह ! माफ कीजिएगा····आप !

टेकचन्दाणी— मिस्टर हेमराज यहीं रहते हैं न ?

गंगा— हाँ ।····

टेकचन्दाणी— शायद अभी आफिस से नहीं लौटे हैं ?····

गंगा— बस, आने वाले ही होंगे··· वैसे तो इस समय तक आ जाते हैं···· इसलिए ही मैंने समझा कि शायद वे ही हैं ·· आप ···

टेकचन्दाणी — मैं टेकचन्दाणी हूं ।····मिस्टर हेमराज से मिलना था ।····

गंगा— तो आईए न !····अन्दर आइये । ·· अभी आने वाले ही होंगे ।

टेकचन्दाणी— कोई खास बात नहीं है ।····मैं थोड़ा चक्कर लगाकर फिर आता हूँ ।····

गंगा— आप यहीं बैठिये न । आते ही होंगे ।····आईये'····अन्दर आइये ।····

टेकचन्दाणी— (अन्दर आकर सोफा पर बैठते हुए) बहुत दिनों से मिलने की सोच रहा था,····ठण्ड के कारण निकलना ही नहीं हो रहा था । आज आफिस से सीधे ही········घर पहुँचने के बाद तो फिर सुस्ती आ जाती है ।····

गंगा— आग लगे····

टेकचन्दाणी— (चौंक कर) जी !····

गंगा— इन घुटनों के दर्द ने तो···थोड़ा ही चलने या बैठकर उठने से बस टीस उभरने लगती है····आप कहाँ से आ रहे हैं ?····

टेकचन्दाणी— सीधा आफिस से····

गंगा— आग लगे ···मेरा मतलब है····कहां रहते हैं ?

टेकचन्दाणी— रहता लजपत नगर में हूँ,···पास ही है ।····

गंगा— हाँ····हाँ ·· एक दो बार जाना हुआ है ।···वहां वरन्दाणी भी तो रहते हैं न ?····

टेकचन्दाणी— लजपत नगर तीन में ?

गंगा— अब तीन और चार की तो जाने ईश्वर ।····सीधे से नाम तो अब रखते नहीं····आठ-आठ लजपत नगर····आग लगे·· जैसे नामों का ही अकाल पड़ गया है····आप क्या पीयेंगे ? चाय बना लाऊँ ?

टेकचन्दाणी— बिलकुल नहीं भाभी,·· आप कोई कष्ट न करें, आफिस से चाय पीकर चला हूँ ।

गंगा— हां,··· आफिस में आजकल और काम ही क्या है ? ये भी बात करते हैं····पर आफिस वाली चाय तो रास्ते में ही खत्म हो गई होगी···· मैं (उठते हुए) आग लगे···

टेकचन्दाणी— आप बैठिये न भाभी,····मिस्टर हेमराज आयें तो फिर देखेंगे ।····

गंगा— (फिर बैठते हुए) आग लगे····कोई आफिस का काम है उनसे ?

टेकचन्दाणी— नहीं भाभी ·· वह···आपके बेटे के सम्बन्ध में किसी ने····।

गंगा— कक्कन के लिये आये हैं ···आपको किसने बताया ?

टेकचन्दाणी— बस भाभी····लड़की वाले तो इधर-उधर हाथ-पैर चलाते रहते हैं न····।

गंगा— कौन हैं ? आपकी अपनी लड़की है ?

टेकचन्दाणी— किसी दोस्त की बेटी है ।····कहता रहता था कि तुम्हारे पड़ौस में रहते हैं ···पता लगाकर बता··· घर देखकर आ ·· ।

गंगा— अच्छा किया आपने····किस वंश से हैं ? कहाँ के हैं ?

टेकचन्दाणी— भाभी, अब ये बातें तो आखिर बतानी ही हैं, पर पहले लड़की वाले जाँच-जूँच कर लें फिर आगे बातचीत····।

गंगा— हाँ····हाँ···पर आजकल तो लड़की के माता-पिता लड़की को भी पहली बार में ही अपने साथ ले आते हैं···आग लगे····

टेकचन्दाणी— अपने-अपने विचार हैं····आपके बेटे की कितनी तनख्वाह होगी··· भाभी ।

गंगा— इन्जीनियर है । दो-तीन हजार तो आजकल लल्लू-पंजू भी कमा लेते हैं । बड़ा इम्तहान भी पास किया है····आपके लिए भला सेव काट-कर लाऊँ·· ऐसे अच्छा नहीं लगता····।

टेकचन्दाणी— आप चिन्ता न करें भाभी···बातचीत कर रहे हैं न····लड़की के सम्बन्ध में आपके क्या विचार हैं ?

गंगा— लड़की तो कम से कम बी. ए. होनी चाहिये····मेरे कक्कन को आपने देखा है ?

टेकचन्दाणी— अभी नहीं ···आज आ गया हूँ तो मिलकर ही जाऊँगा ।

गंगा— लड़का डील-डौल का अच्छा है····आपकी लड़की····आग लगे····

टेकचन्दाणी — (चौंककर) जी !

गंगा — इस दर्द ने तो परेशान कर दिया है····आपकी लड़की सुन्दर होगी····।

टेकचन्दाणी — अपनी कन्या तो हर एक को सुन्दर ही लगेगी न, भाभी ···बाकी पसन्द है लड़के-लड़की की ···एक-दूसरे को पसन्द कर लें····रंग गोरा है····डील-डौल की अच्छी है····बदन की छरहरी है····।

गंगा — होटलों और सिनेमाओं का भी शौक है ?

टेकचन्दाणी — हम जैसे मंझले दर्जे वालों की लड़कियाँ····।

गंगा — आजकल के लड़कों को तो चाहिए नटखट लड़कियाँ·······नौकरी करती है ?

टेकचन्दाणी — इस समय एक फर्म में पी. ए. है ।····

गंगा — पी. ए.····आफिस ···पर पी. ए. की नौकरी तो ···आफिस में अपने आफिसरों के साथ····।

टेकचन्दाणी — हर एक लड़की का अपना-अपना तरीका होता है····।

गंगा — मेरा मतलब है या तो लड़की नौकरी ही न करे —अगर करनी ही हो तो फिर अध्यापिका की अच्छी····सवेरे जाये, पढ़ाये न पढ़ाये ····ट्यूशन करे ··इज्जत की इज्जत···और पैसे का पैसा····।

टेकचन्दाणी — ठीक है, पर भाभी, आप तो नए और पुराने जमाने की बातें साथ-साथ कर रही हैं ।

गंगा — यही तो बात है न···मैं तो चाहूँ कि बहू नौकरी ही न करे ··सास तो बेचारी मर पूरी हुई कि नहीं ।

टेकचन्दाणी — पर नौकरी के बिना आजकल पूर्ति भी तो नहीं होती न···आप का लड़का····।

गंगा — आग लगे····यही तो मैं कह रही हूँ कि, बहू तो सुबह से चली जाय नौकरी पर····पीछे सास पड़ी पचती रहे····अपने बच्चों के तो पोतड़े धोए, अब पोते-पोतियों के भी ···आग लगे····अब शक्ति रही है क्या ? रोटी-पानी भी हम करें····।

टेकचन्दाणी — आप चाहें तो नौकरी न कराएँ····।

गंगा — यही तो बात है न ···आजकल के खर्चे हैं गर्दन तोड़ ···उनके कपड़ों और हार-सिंगार पर ही सैकड़ों खर्च हो जाते हैं—।

टेकचन्दाणी — भला, लेन-देन के बारे में····।

गंगा — लड़का तो इस बात के बिलकुल खिलाफ है । इनका भी यही विचार है कि अपने मुँह से कुछ माँगना···आग लगे····(बाहर से घन्टी

बजती है) आ गए होंगे···· (उठकर जाकर दरवाजा खोलती है) आग लगे···।

गंगा— (दरवाजे पर ही) क्यों, आज देर कर दी ?··· कहीं चले गये थे क्या ?

हेमराज— (हाथों में सामान से भरी थैलियाँ हैं) जाऊँगा कहाँ ? तुम्हारी नौकरी जो करनी थी।··· लिस्ट बनाकर दे देती हो·· जैसे फिर वह सामान बाजार में मिलेगा ही नहीं।····

गंगा— आग लगे · आप ही तो कहते हैं कि जो चाहिए वह एक बार में ही···· आप तो बिलकुल··· आप से मिलने के लिए बैठे हैं··· आग लगे···।

हेमराज— (अचानक टेकचन्दाणी को देखकर) ओह ! माफ कीजियेगा····यह (थैलियाँ दिखाते हुए) क्या करें श्रीमान गृहस्थी तो चलानी ही है न · आप बैठिए····मैं एक मिनट में ये सब··· आप तब तक पानी-वानी पीजिए (टेबल पर कुछ भी न देखकर) तुम भी कमाल करती हो···· ··· अब तक इन्हें बिस्कुट पानी वगैरह भी नहीं दिया है ?····

गंगा— मैंने तो इन्हें बहुत ही कहा····आग लगे···।

टेकचन्दाणी— (मुस्कराकर) मैंने ही रोका इन्हें··· आप के साथ ही पी लेंगे···।

हेमराज— पर तब भी श्रीमान्··· आप को आये बहुत समय हो गया ?

टेकचन्दाणी— थोड़ा ही समय हुआ है। आफिस से सीधा आ रहा हूँ····।

हेमराज— अच्छा ! फिर तो श्रीमान् आप भी थोड़ा मुंह हाथ धोकर फ्रैश हो लीजिये न ?··· फिर बैठकर बातें भी करते हैं और चाय भी पीते हैं। आइये,···आइये,··· अपना ही घर समझिये।··· आप विश्वास करेंगे ? मैं जहाँ भी जाता हूँ अपनों की तरह ही जाता हूँ।

(टेकचन्दाणी उठकर साथ जाता है। अन्दर के दरवाजे पर खड़े होकर हेमराज हाथ में थैली लिये ही इशारे से बताता है) वह सामने दरवाज़ा है। वाश बेसिन अन्दर ही है। तौलिया भी वहीं टँगा हुआ है। (टेकचन्दाणी अन्दर के दरवाजे से होकर चला जाता है। हेमराज थैलियाँ लिए हुए अन्दर चला जाता है और थोड़ी ही देर में थैलियाँ रखकर वापस मंच पर आता है।)

हेमराज— (गंगा से, जो इस बीच सामान ठीक कर रही होती है) तुम्हें चाहे सौ बार समझाया जाये·· पर जैसे औंधे घड़े पर पानी··· शाम का समय है····भई, साफ-सुथरा होकर घर में बैठना चाहिये····और तुम

हो कि इस समय भी गाऊन पहने पराए लोगों के सामने आकर दरवाजा खोलती हो····।

गंगा— मुझे क्या पता था···मैंने समझा कि आप हैं····।

हेमराज— उस पर भी दरवाजे पर ही की होगी सवालों की बौछार···बेचारा कुछ देर तो हक्का बक्का रह गया होगा····।

गंगा— आग लगे····आपके साथ ऐसा कितनी बार हुआ है ?····और अपने आप को नहीं कहते····आते ही शुरू कर दिया ज़नाना रोना-धोना। दूसरे मर्द तो जैसे घर का काम-काज ही नहीं करते····।

हेमराज— अच्छा-अच्छा····अब बन्द करो····और धीरे नहीं बोल सकती ?········ वह भला आदमी सुनेगा तो समझेगा····अच्छा, भला है कौन ? कैसे आया है ?

गंगा— नाम टेकचन्दाणी है····लजपतनगर से····किसी दोस्त की लड़की के लिए आया है जाँच-जूच करने···कक्कन की····।

हेमराज— सब बहाने हैं····शर्त लगाओ····लड़की उसी की होगी····आजकल हर कोई पहले ऐसा ही कहता है·······क्या करता है····कोई धन्धा है उसका ?

गंगा— नौकरी करता है।

हेमराज— धन्धे वाला होता तो अच्छा····खैर····बाकी हालचाल उसी से पूछ लेंगे····यह गाऊन तो उतारो, जैसे दाई लग रही हो····ऐसी अच्छी-अच्छी साड़ियाँ होते हुए····।

गंगा— असल में, मुई साड़ियाँ हैं कुल तीन····वह भी····।

हेमराज— सब कुछ होते हुए भी नहीं-नहीं लगाये बैठी हो····अब नाश्ता कुछ सोच समझकर लाना····इतनी अधिकता कर देती हो कि····सामने वाला समझे····नकली शान दिखा रहे हैं····इतना फार्मलटी में मत पड़ो····सैकड़ों रिश्ते आते रहेंगे····।

गंगा— आप क्या जानें ? यह भी तो शान की बात है····आप भी कुछ सोच समझ कर बोलियेगा····बातों में छूटते हैं तो बस····।

हेमराज— मुझे बात करना नहीं आता ? आफिस में तो लोग मेरी बातों की सराहना करते हैं और घर में····।

गंगा— मुँह पर जूता कौन मारेगा ? पीठ पीछे क्या कहते हैं वो तो····।

हेमराज— वो तुम जानती हो····यही न····।

गंगा— अपनी ही इधर-उधर की बातें लेकर मत बैठ जाना····अगला ही 'बोर' होकर चला जाए····।

हेमराज— और तुम भी यह "आग लगे····आग लगे····" ज्यादा मत कहा करो ····बस अगले को तो थर्रा देती हो····कभी-कभी तो ये शब्द ऐसे अनुचित स्थान पर कह देती हो कि····।

गंगा— जानकर तो नहीं कहती····मुआ घुटनों का दर्द न जाता है और न जान लेता है····आग लगे····।

हेमराज— तुमने उससे कुछ लेन-देन की बात की है क्या ?

गंगा— आग लगे···भला मैं क्या बात करती····आपकी तरह मुझे तो ये उल्टी-सीधी बातें करनी नहीं आती····।

हेमराज— ठीक है····ठीक है । आजकल कुछ सोच समझकर ही बात करनी पड़ती है··· बेकार में ही बदनामी हो जाए ।

गंगा— इससे तो सीधे ही बात करना अच्छा····किसी दिन ऐसा होगा कि ····"आमों की आशा में, गुठलियाँ पल्ले पड़ गई····।"

हेमराज— तुम बीच में मत बोलना····मैं जानूं मेरा काम····देखना····कैसे अपनी शान भी रखते हैं और मंशा भी पूरी करते हैं ।

(अन्दर से टेकचन्दाणी रूमाल से हाथ पोंछता हुआ आता है ।)

हेमराज— श्रीमान्, वहीं तौलिया पड़ा था····खैर आइए-आइए····बैठिए···· आराम से बैठिए श्रीमान्··· वरना यह सोफा सेट क्यों रखा है···· अपना ही घर समझिए····।

टेकचन्दाणी— महरबानी····।

हेमराज— हाँ तो श्रीमान्····कहिए क्या हाल चाल हैं····राजी खुशी···· बच्चे-वच्चे सब प्रसन्न····वाईफ ने बताया कि आप लजपतनगर से आए हैं ····कक्कन के लिए····।

टेकचन्दाणी— बिलकुल ठीक ····मेरे एक दोस्त····।

हेमराज— अब श्रीमान्, कन्या आपके दोस्त की हो या आपकी····हमारी भी तो कन्या ही हुई न··· ····लाज ढंकी भली··· ··· पर अगर बता भी दें, तो हम कोई ढिंढोरा थोड़े ही पीटेंगे कि हमारे पास अमुक-अमुक घर का रिश्ता आया था ।

टेकचन्दाणी— आप ठीक कहते हैं·······तब भी लड़की वाले हुए न·······।

गंगा— आग लगे·······(घुटनों पर हाथ फेरती है)

टेकचन्दाणी— (चौंक कर) जी !
(हेमराज गंगा को घूरकर देखता है ।)

हेमराज— माफ कीजिएगा·······घुटनों के दर्द के कारण कुछ परेशान है······ आप क्या पीयेंगे ? चाय या ठण्डा ? मेरा विचार है··· ···कुछ ठण्ड है·······चाय पीते हैं······ और खाने के लिए (गंगा की तरफ) दो चार पापड़ ही सेक लाओ··· ···श्रीमान हम सिन्धियों के पापड़ तो·······हाँ, तो श्रीमान्, कुछ तो बतायेंगे ?

टेकचन्दाणी— नाम और वंश के नाम के सिवाय सब कुछ बताऊँगा······ ।

हेमराज— तो लड़के के पिता कौनसी नौकरी करते हैं·······लड़की का परिचय ·······सिन्ध में कहाँ के निवासी हैं,·······यदि शुरू में ही बात पसन्द न आए तो फिर बेकार ही बात आगे बढ़ाने से क्या लाभ·······।

टेकचन्दाणी— ठीक है श्रीमान्·······अच्छे वंश के हैं,·······सिन्ध में असल गांव ठारूशाह·······साहिती के··· ···सरकारी अफसर है···· ··· अपना मकान है उनका·· ···एक बेटा है छोटा······ लड़की यही एक है ·······बी. ए. है······ नौकरी करती है प्राईवेट फर्म में······ आठ सौ रुपया तनख्वाह है·······आपके लड़के की श्रीमान् कितनी तनख्वाह है ?

हेमराज— आजकल श्रीमान् तनख्वाह कौन पूछता है ? ए.आइ.एम.ई पास है ·······बस इन्जीनियर बनने ही वाला है·······तनख्वाह तो इस वक्त उसकी भी आठ सौ ही है, पर श्रीमान् जान-पहचान उसकी बहुत अच्छी है·······आजकल तो ले दे का रिवाज है······ इस हाथ दे······उस हाथ ले·······।

टेकचन्दाणी— कुछ बातचीत तो भाभी जी से हुई थी··· ···सचमुच आप जैसे इन्सान तो बिरले ही मिलते हैं······ आजकल तो बस दहेज की ही आग लगी हुई है······ जहाँ जाओ, वहाँ मुँह फाड़े बैठे हैं·······।

हेमराज— नादानी है श्रीमान्··· ··· अच्छा, ये बताइये कि लड़की रंग-रूप की कैसी है ?·······आपने मेरे लड़के को तो अभी तक नहीं देखा होगा ?

गंगा— (चाय की ट्रे में पापड़ वाली प्लेट भी लेकर आती है) आग लगे····

टेकचन्दाणी— (चौंककर) जी !

(हेमराज फिर घूर कर गंगा को देखता है ।)

हेमराज— ऐसे बेटे तो भाग्य से मिलते हैं·······किसी तरह की कोई आदत नहीं·······आफिस से सीधा घर चला आता है·······इसके बाद चाहे ठेकेदारों से मिली दावत पर जाये·······क्या करे ? सम्बन्ध तो रखने ही हैं न·······।

गंगा— (चाय रखकर सोफा पर बैठते हुए) आग लगे·······।

टेकचन्दाणी— आपकी कोई माँग·······कोई शर्त·······।

हेमराज— शर्त ! श्रीमान् समधियों से सिर्फ आँखों से बात करते हैं·······हमारी क्या मांगें होंगी ?

गंगा— ईश्वर की दया से सब कुछ है·······कहती हूँ·······मुए मन, साथ क्या ले जाना है ? सब यहीं धरा रह जाएगा·······।

हेमराज— यह भी श्रीमान्·······राधास्वामी है·······मांस-मछली को तो हाथ तक नहीं लगाती·······।

टेकचन्दाणी – मैं तो श्रीमान्·······किन शब्दों में आपकी तारीफ करूँ ? आप दोनों के विचारों ने तो मन मोह लिया है·······।

हेमराज – हम भी श्रीमान् स्वतन्त्र विचारों के हैं । बेटे के साथ भी मित्रों जैसा व्यवहार हैं·······जूता भी एक ही है·······विश्वास करेंगे ? तीन वर्षों में मैंने जूता नहीं खरीदा है·······कक्कन जो पहनना छोड़ देता है·······वह मैं पहन लेता हूँ (पहना हुआ जूता दिखाते हुए) यह देखते हैं·······अभी नया ही है न·······।

गंगा— (घूर कर देखती है) आग लगे·······आप भी अभी तक मजाक की आदत छोड़ते नहीं·······नये लोग क्या समझेंगे ?

हेमराज— (हंसकर) यही तो श्रीमान्, हम दोनों में अन्तर है·······आप मांग के विषय में पूछ रहे थे न·······तो श्रीमान् मेरी नौकरी के अभी आठ साल बाकी हैं·······लड़की एक ही थी । उसका विवाह कर दिया·······वह अपने घर सुखी·······यदाकदा आकर मुँह दिखा जाते हैं·······।

गंगा— फिर, जो श्रद्धा होती है, दे देते हैं·······लड़की को तो जितना दो·······उतना कम·······ईश्वर ने सब कुछ दिया है·······आग लगे·······(चाय पीते रहते हैं)

टेकचन्दाणी— आपका दूसरा भी एक बेटा है न शायद·······।

हेमराज— हाँ·······उसने भी बी. कॉम पास किया है·······बैंक में नौकरी मिली है·······।

टेकचन्दाणा— तो फिर उसकी भी साथ-साथ ही.......।

गंगा— नहीं.......अभी वह छोटा है.......।

हेमराज— (मुस्कराकर) बिल्कुल ठीक....... जल्दी क्या है......उल्टा दो विवाहों की मिठाइयाँ खायेंगे.......।

टेकचन्दाणी— आप जैसे हँसमुख लोग कम ही मिलते हैं.......पर श्रीमान् आपने अभी तक ....अपनी.......मेरा मतलब है.......लड़की के विषय में.......या.......देखिए न, इन बातों पर साफ स्पष्ट बात हो तो अच्छा है ......बाद की गलतफह्मी से.......।

हेमराज— आप तो बहुत भावुक हैं.......देखिए न.......लड़के वालों को क्या चाहिए ? लड़के को चाहिए लड़की.......पढ़ी-लिखी हो....... समझदार हो.......छरहरी और साफ रंग की हो.......कद की लम्बी और सुडौल हो.......यानी कि आकर्षक हो.......जैसे बराबर के लोगों में सराहना हो.......सोसाइटी में उठ-बैठ सके।

गंगा— आग लगे.......मुझे तो लड़की चाहिए आज्ञाकारी.......सास-ससुर की सेवा करे.......आज्ञा माने.......घर के काम-काज में हाथ बंटाए.......आते ही एक घर के दो घर न करदे.......यानी कि अच्छी सुघड़ बहू हो.......।

हेमराज— बाकी रहा मैं न ? तो श्रीमान् ही-ही-ही.......वह तो आप समझ सकते हैं कि मुझे क्या चाहिए.......?

टेकचन्दाणी— कुछ अनुमान हो जाता तो.......।

हेमराज— आप गलत न समझें तो श्रीमान्.......पैसा क्या गठरी बाँध कर अपने साथ ले जाना है ?.......धन तो मिट्टी है.......खुद मरने के बाद किस काम आयेगा ?

टेकचन्दाणी— वाह ! वाह !! धन्य-भाग्य.......न जाने किस जन्म के पुण्य हैं ... .जो आप से मिलना हुआ है.......।

गंगा— आग लगे.......मन को समझाते रहते हैं.......मुए मन.......क्या साथ ले जायेंगे ? पर, लोक लाज से सब कुछ करना पड़ता है.... ....लड़की के पिता बेचारे.......आग लगे.......।

टेकचन्दाणी— (चौंककर) जी !

हेमराज— बस, इस बात में मेरे विचार शत-प्रतिशत, इससे मिलते हैं....... चाहते है कि समधी शान-मान वाले मिलें.......उनके यहाँ जायें तो आदर सत्कार हो.......बिरादरी में नाम हो.......कोई ऐसा न कहे कि भाई कहाँ जाकर फँसे हो ?

टेकचन्दाणी— आप चिन्ता न करें श्रीमान्·······इस बात में तो मैं भी आपके विचारों से सहमत हूँ·······पहले समधी फिर जंवाई·······बेटी जीवन भर खाती रहेगी·······।

हेमराज— अब कुछ-कुछ समझ गए हैं श्रीमान्······ मैं तो इन बातों में बिल्कुल इंकलाबी विचारों का हूँ·······बिल्कुल रेडीकल·······या यूं समझिए कि·······

गंगा— (बीच में ही) इसीलिए सब इन्हें··· ····"कान फाड़" भी कहते हैं·······।

टेकचन्दाणी— (चौंकते हुए) जी !

हेमराज— (गंगा से) जरूरी है कि जो बात समझ में न आए·······वह कह दी जाए ?

गंगा— आग लगे·······आप ही तो ये शब्द कहते हैं·······।

हेमराज— (अचानक हँसते हुए, टेकचन्दाणी से) यानी नान कन्फर्मिस्ट हूँ···· ····सिन्धी समाज में ये शब्द भले ही नये हैं·······पर आप मेरा मतलब समझ गये होंगे·······।

टेकचन्दाणी— (हँसी में साथ देते हुए) बिल्कुल श्रीमान्, मतलब यह कि आप पुरानी परिपाटियों में विश्वास नहीं करते हैं·······।

हेमराज— एक्जैक्टली·······देखिए न·······मैं दहेज के सख्त खिलाफ हूँ······· बिल्कुल कट्टर·······आजकल यह रोग हमारे समाज में घर-घर में फैल गया है·······दुख होता है·······।

गंगा— कोई भी माता-पिता अपनी लड़की को भला कम चाहेंगे ?······· अपनी शक्ति अनुसार तो अपनी लड़की को थोड़ा-बहुत देंगे ही····।

टेकचन्दाणी— ये तो है ही·······पर जबरदस्ती की मांग ही तो मारती है·······।

हेमराज— मेरे लड़के के विचार भी मुझ से मिलते हैं·······जबरदस्ती की माँग क्यों की जाये ? आखिर लड़की के माता-पिता भी तो समाज में ही रहते हैं·······उन्हें भी तो मालूम है कि आजकल क्या रिवाज हैं···· ····विशेष कर अपने मध्यम वर्ग वालों को·······।

टेकचन्दाणी— आप ठीक कहते हैं श्रीमान्, पर फिर भी आप की कोई माँग हो तो·······।

हेमराज— इस विषय में तो मैं बिल्कुल ही कुछ नहीं कहना चाहता । आजकल का जो रिवाज है·······उसके अनुसार हर एक अपने आप ही सब कुछ करता है । आपकी बातों से स्पष्ट है कि लड़की तो हमें पसन्द आ ही जायेगी·······।

गंगा— आग लगे·······न पसन्द आने की तो कोई बात ही नहीं है·······।

हेमराज— बाकी यह बात तो कुछ भी नहीं·······और न लड़की वालों को कोई ऐतराज ही होना चाहिए·······अगर लड़का और हम उन्हें पसन्द हैं तो फिर थोड़ी बहुत तो कुर्बानी उन्हें भी करनी ही पड़ेगी ·······हाँ हमारी तरफ से कोई जबरदस्ती नहीं होगी·······।

टेकचन्दाणी— सचमुच, आपके विचार बहुत पसन्द आए·····आजकल के समय में ·····तो फिर आप लड़की देखने का कार्यक्रम कब बनाते हैं········(उठकर खड़ा हो जाता है)

हेमराज— जल्दी क्या है ? आप अपने दोस्त को हमारे विचार बताइए······· लड़का देखिये···· ····कुछ जाँच-जूँच करिये···· ····फिर फोन कर दीजियेगा और पता बताइयेगा·······परम्परा अनुसार हम लड़की देखने नहीं आयेंगे·······न ही कोई अधिक धूमधाम ही करेंगे······· किसी समय वैसा ही आते-जाते लड़की को देख लेंगे। (उठता है)

गंगा— आग लगे·······(उठते हुए) हर किसी की बेटियाँ बैठी हैं·······तोबा है मेरी·······ईश्वर से कहती हूँ कि·······।

टेक चन्दाणी— अच्छा श्रीमान्। फिर मिलेंगे। (नमस्ते कर चला जाता है)

हेमराज— तुम यह "आग लगे" बन्द नहीं करोगी ?

गंगा— आप तो काम ही बिगाड़ रहे थे·······अब भी वह वापस लौटेगा भी कि नहीं·······।

हेमराज— यह सब मुझ पर छोड़ दो·······।

गंगा— (अन्दर जाते हुए) आग लगे।

* *

(दृश्य—द्वितीय)

(वही कमरा मिस्टर हेमराज के घर का ड्राइंग रूम।)
समय—प्रातः आठ बजे।

(प्रकाश होने पर स्टेज पर हेमराज और गंगा डाइनिंग टेबल पर चाय पी रहे हैं। बाहर से घण्टी बजती है। गंगा जाकर दरवाजा खोलती है।)

गंगा— आग लगे·······सवेरे-सवेरे किसका आटा कम हुआ है·······?

हेमराज— तुम भी हर एक को आग लगाती फिरती हो·······होगा शनी महाराज·······साथ में तेल-तिल भी लेती जाओ न·······।

गंगा— (दरवाजा खोलते हुए) महाराज, तुम भी सवेरे-सवेरे आकर घण्टियाँ बजाते हो·······ओह ! आप ! आग आगे·······माफ कीजिएगा ·······आइये·······आइये·······अन्दर आइये न·······।

हेमराज— (हड़बड़ा कर उठते हुए) इस······ गंगा को भी सौ बार समझाया है······ आइये, आइये न श्रीमान् ! बाहर क्यों खड़े हैं······ इसने समझा शनिचरी महाराज है··· ··· (हाथ मिलाते हुए) आ जाइये···· ···ठीक समय पर आये हैं······ बस अभी-अभी चाय शुरू ही की थी··· ····गंगा ! कुछ बिस्कुट वगैरह भी ले आओ··· ····।

टेकचन्दाणी— नहीं······ कष्ट मत कीजिए··· ··· मैं भी······सवेरे-सवेरे·······।

हेमराज— वाह श्रीमान्, कष्ट कैसा ? अब तो आप को ही कष्ट देंगे··· ···· आइये··· ····इधर सोफा पर आराम से बैठिये··· ····। सुनाइये क्या हाल हैं······ सब आनन्द है न ?

टेकचन्दाणी— और सब तो आनन्द है······ कल वरुदाणी से आपका संदेश मिला ·······बात कुछ समझ में नहीं आई······ सोचा शायद संदेश गलत मिला हो·······सो खुद मिलने चला आया·······।

गंगा— (बैठते और चाय देते हुए) आग लगे······अच्छा किया·······

हेमराज— संदेश तो बिल्कुल स्पष्ट था श्रीमान्······ मैंने तो पहले ही कहा था कि मैं नान कन्फरमिस्ट (Non Confirmist) विचारों का आदमी हूँ·······मेरी तरफ से कोई दबाव नहीं·······।

टेकचन्दाणी— तो फिर··· ··· मैं समझा नहीं··· ··· आपके लड़के ने तो अभी तक मेरी लड़की को देखा भी नहीं·······।

गंगा— हमने तो देख लिया न ?······हमारा कक्कन, हमारा कहना थोड़े ही टालेगा ?

हेमराज— हमारा कक्कन तो श्रीमान् लड़की देखना ही नहीं चाहता··· ···· हमारी पसन्द·······सो उसकी पसन्द··· ····आप तो बस शगुन की तैयारी कीजिये·······।

टेकचन्दाणी— पर आपकी माँग·······।

हेमराज— माँग ! यह आप क्या कह रहे हैं ? मैं तो बिल्कुल रेडीकल प्रकार का इन्सान हूँ····हमारी कोई भी माँग नहीं है····हम तो बस इतना चाहते हैं कि, हम सिन्ध के जिस क्षेत्र के हैं··· ··· वहाँ के रीति-रिवाज के अनुसार व्यवहार हो······ ।

गंगा— आप भी संसार में रहते हैं ………घूमते-फिरते हैं ………सब कुछ देखते भालते हैं ……… यार-दोस्तों के विवाह आदि में ………आग लगे ……।

हेमराज— देखिये न, हमारे परिवार का एक स्टैण्डर्ड है………खाना पहनने का ………वस्त्र आदि देने का ……… मिलनी देने का ………बारातियों का आदर-सत्कार करने का………यह सब कुछ तो श्रीमान् करना ही पड़ेगा न ?

टेक चन्दाणी— पर उस दिन जो बातचीत हुई………उसके अनुसार तो………।

गंगा— आखिर नाक पर कोई कालिख तो नहीं लगायेगा न ?………हमें भी तो अपने सगे-सम्बन्धियों में रहना है न ? अभी दूसरा लड़का भी तो बैठा है………उसका भी ध्यान रखना पड़ेगा।

हेमराज— यही तो बात है न श्रीमान्………आज से तीन वर्ष पहले जो कुछ हमने अपनी लड़की को दिया………लड़के वालों का आदर-सत्कार किया…………उतना तो हम भी चाहेंगे। विश्वास करेंगे ? उस समय मेरी इतनी सामर्थ्य भी नहीं थी………।

टेक चन्दाणी— तो………आपने कर्ज लेकर इतना सब कुछ किया ?

गंगा— आग लगे………लड़की जो परायी करनी थी………उस समय यह सब थोड़े ही सोचा जाता है ?

हेमराज— एक बात कहूं ? आपको अभी इतना अनुभव नहीं है तभी ऐसी बातें कर रहे हैं……आपके ही मित्र………उसने……जोतसिंहानी ने……।

टेक चन्दाणी— पर श्रीमान्………किसी की देखा-देखी थोड़े ही करनी है………यूं तो लड़की को जितना दिया जाये सो कम है………पर अपनी चादर के अनुसार ही तो कोई पैर फैलायेगा न ?

हेमराज— श्रीमान्, अब इन बातों पर तो वाद-विवाद किया नहीं जा सकता ………विश्वास करेंगे ? कल भी सदर बाजार का एक सेठ आया था………अपने साथ चैक बुक भी लेकर आया था………बिल्कुल ब्लैंक चैक………कोरा ! दस्तखत करके सामने रख दिया……… विश्वास करेंगे………?

टेकचन्दाणी— विश्वास क्यों नहीं करूँगा ? पर उसके काले धन से मेरे………।

गंगा— आग लगे………(हेमराज घूर कर देखता है)

हेमराज— नहीं श्रीमान् नहीं………काला हो या सफेद………धन तो धन ही रहेगा न ? पर बात यह थी कि अगर उनका सम्बन्ध स्वीकार करता हूँ तो वह ठहरा धन्धे वाला………आपस में मिलकर बैठें तो

क्या बात करें ? इन सम्बन्धों में विचारों की एकरूपता भी तो होनी चाहिए न ? इसलिए आपका सन्देश भेज दिया·······।

गंगा— मैंने ही समझाया कि अपने साथ हमें क्या ले जाना है ? सज्जन आदमी है·······आग लगे·······।

टेकचन्दाणी— (चौंककर) जी !

हेमराज— आप तो श्रीमान् बेकार में ही घबड़ा गए हैं·······देखिए न······· पहले सिन्ध में होती थी मिश्री, उस पर पाई और बताशा·······अब हिन्दुस्तान में तो न रही है पाई और न मिले बताशा·······इसलिए हमने कहा, चलो पाई के बदले एक गिन्नी और बताशे के बदले पाँच-दस किलो मिठाई ही दे दें·······।

गंगा— मिठाई कोई खुद तो खाएंगे नहीं·······अड़ौस-पड़ौस में·······सगे-सम्बन्धियों में ही बाँटी जाएगी··········शोभा तो आपकी ही होगी न ?

टेकचन्दाणी— पर भाभी ! आजकल गिन्नी की कीमत कितनी है·······यह भी जानते हैं ?

हेमराज— आप तो श्रीमान् ऐसे कह रहे हैं जैसे हमने कभी गिन्नी देखी ही नहीं·······और वैसे तो हम पक्की मिश्री के बिल्कुल खिलाफ हैं········पर लड़की और दामाद जो आयेंगे·······तो कहा कि चलो पक्की मिश्री पर·······अधिक नहीं तो·······पाँच गिन्नियां ही सही·······मिठाई हुई·······नारियल हुए·······नकद, चलो पाँच हजार ही दीजियेगा·······बाकी अब भाई, बहिन, लड़की के जोड़े·······थोड़ी बहुत मिलनी·······यह तो हर एक करता ही है न ? हम पति-पत्नी को कोई लालच नहीं··········हमारे लिए वेश आप भले ही मत बनवाइयेगा····

गंगा— आग लगे·······वैसे आप बनवाएँ भी तो अनुचित थोड़े ही है·······हमने भी मन्नत मानी है कि पहले बेटे की सगाई-विवाह पर समधी से मिले वेश पहनेंगे । आग लगे·······उठूँ·······अभी तो कक्कन के लिए खाना बनाना है·······।

टेकचन्दाणी— (व्यंग्य से) बाकी जो माता-पिता चाहें सो विवाह में खर्च करें········आपकी तरफ के स्टैण्डर्ड के अनुसार कम से कम बीस तोले सोना तो डाला ही जाता है·······बारातियों के लिये किसी शानदार होटल में 'डिनर' की व्यवस्था·······ज्यादा झंझट ही नहीं··· ····

नगद इच्छा हो तो कुछ दें·······बाकी अपनी लड़की के लिए वस्त्र आदि लड़की की पसन्द से बनवाएँ·······।

गंगा— आग लगे ·······(उठकर अन्दर जाती है)

हेमराज— (मुस्कराते हुए) आप तो श्रीमान् खुद समझदार हैं·······मैं क्या कहूँ ·······लड़की भी तो एक ही है आपकी·······कौन से दस-बीस अवसर मिलेंगे आपको कन्या दान के·······यूँ तो आजकल के नियम अनुसार पिता की सम्पत्ति में लड़की का भी हिस्सा·······।

टेकचन्दाणी— आप जैसे नान कन्फर्मिस्ट और रेडीकल विचार सब के हो जाएँ तो·······।

हेमराज— आप तो मुझे शर्मिन्दा कर रहे हैं·······।

गंगा— (अन्दर से आते हुए) आग लगे·······वह कवकन·······सुनते हैं क्या कह रहा है ?

टेकचन्दाणी— हनी-मून के लिए पैसे चाहता होगा·······।

हेमराज— यह बात तो श्रीमान् मेरे ध्यान से ही उतर गई थी·······

गंगा— उसने तो पहले से ही लड़की ढूँढ ली है··········कहता है कोर्ट में विवाह करेगा·······।

हेमराज— ऐसा कैसे कहेगा ? हम उसके माता-पिता हैं······ लड़की कौनसी है ?

गंगा— आग लगे·······।

हेमराज— (नाराज होकर) आग लगाने से पहले कुछ बताओगी भी ?

टेकचन्दाणी— आप क्यों चिन्ता कर रहे हैं श्रीमान्·······आखिर आपकी ही तो सन्तान है न ? कोई ज्यादा मालदार असामी ढूँढ लिया होगा·····।

गंगा— आग लगे·······लड़की आपके ही तरफ की है·······।

हेमराज— ठारूशाह की ? पर लड़की किसकी है ?

टेकचन्दाणी— होगी किसी सदर बाजार वाले की लड़की·······।

गंगा— लजपत नगर में ही रहते हैं·······।

टेकचन्दाणी— लजपत नगर में ! फिर तो मैं जरूर जानता होऊँगा·······उसके पिता का नाम क्या है ?

हेमराज— नौकरी है या कोई धन्धे वाला है ?

गंगा— अब आप खुद ही क्यों नहीं पूछ लेते·······आग लगे·······लड़की का सिर्फ नाम बताया है·······सुशीला·······।

टेकचन्दाणी— सुशीला ! मेरी बेटी का नाम भी तो यही है·······।

गंगा— आग लगे·······आजकल के लड़के-लड़कियां·······।

टेकचन्दाणी —आपके लड़के का नाम क्या है ?·······

गंगा— कक्कन·······।

टेकचन्दाणी —यह तो प्यार का नाम है·······छठी का नाम ?

हेमराज— राजू·······राजकुमार·······।

टेकचन्दाणी —राजकुमार चंचलाणी ! आपका वंश चंचलाणी है·······?·······हेम-राज·······सी. एच.·······।
(अचानक जोर-जोर से हँसने लगता है)

हेमराज— आपको अचानक क्या हो गया श्रीमान् ? अभी तो अच्छे-भले थे।

गंगा— आग लगे·······।

टेकचन्दाणी —इसको कहते हैं "दीपक तले अन्धेरा"·······लड़का बगल में·······और ढिंढोरा शहर में·······।

हेमराज— फिर भी श्रीमान् कुछ साफ-साफ तो बताइए कि समझ में आए····।

टेकचन्दाणी— अब भी नहीं समझे·······आपका लड़का तो हमारे घर आता रहता है·······मेरे लड़के का गहरा दोस्त है·······पर सुशीला यह कमाल कर दिखाएगी·······यह तो कभी मैंने सोचा ही नहीं था·······बेकार ही परेशान हो रहा हूँ·······।

हेमराज— आपको श्रीमान्, अपनी लड़की पर नजर रखनी चाहिए थी·······।

टेकचन्दाणी— और आपको अपने लड़के पर·······पर श्रीमान्·······हवा ही बदल गई है·······।

गंगा— आग लगे (अन्दर जाने के लिए बढ़ती है)

टेकचन्दाणी— भाभी ! अब तो सचमुच समधी हुए·······चाय फिर पीयेंगे·······आप और कक्कन के साथ·······क्या विचार है ?

हेमराज— मैं तो श्रीमान् रेडीकल विचारों का ····बिल्कुल नॉन कन्फर्मिस्ट हूँ····

गंगा— आग लगे·······इसीलिए तो कहती हूँ·······मुए मन···· ····
(तीनों हँसते हैं)
(पर्दा धीरे-धीरे गिरता है।)

* *

एकांकी नाटक-4

अहसास

गोविन्दराम "माया"

पात्र—

गुल	—	भुगड़ेमल का लड़का
मां	—	गुल की मां
पिता	—	गुल के पिता
शील	—	गुल की पत्नी
कान्ता	—	रेनु की सहेली
रिक्शावाला	—	कान्ता को रिक्शा में लाने वाला
डाक्टर	—	कान्ता की जाँच करने वाला डाक्टर
रामचन्द्र	—	भुगड़ेमल का मित्र
डाकिया	—	डाकिया
रेनु	—	गुल की बहन

(पर्दा खुलता है)

घर का दृश्य।

(श्री भुगड़ेमल की बैठक में एक सोफा, दो कुर्सियाँ और एक टी टेबल पड़ी है। पसीने से तर गुल बैठक में आकर सोफे पर बैठकर पैर पसार देता है।)

गुल— वाह रे जयपुर वाह, घर कहाँ और आफिस कहाँ।

मां— गुल, ओ बेटे गुल, तुम आ गये, (दूर से ही आवाज देती हुई मंच पर प्रवेश करती है) मेरे लाल ! हाँ, यह लो तौलिया, पसीना पोंछ लो।

गुल— मां, यह पसीना तो रोज ही बहता रहेगा, तुम भला कब तक तौलिए देती रहोगी ?

मां— बेटे, यही तो मैं भी सोच रही हूँ, मेरा तो भाग्य फूटा था। न जाने कौन सी घड़ी थी, जो बैंगन की मां के कहने पर लगकर यह काम कर बैठी।

गुल— किसकी बात कर रही हो मां ?

मां— किसकी ? और किसकी, तुम्हारे ससुराल की बात कर रही हूँ। रिश्ता होने से पहले बहू की मां, बस पल्ला पकड़कर खड़ी हो गई। तेरे पिताजी की भी मत मारी गई जो 'हाँ' कह दी।

गुल— मां, शील से कोई गलती हो गई है क्या ?

पिता— (दूर से आते हुए) नहीं बेटे, गलती तो मुझ से हुई है, जो मैंने बताशेमल पर विश्वास किया। और उससे दहेज के दस हजार रुपये कम लिए। मैं समझता था कि बनिया जल्दी पैसा चुका देगा, पर उसने तो अभी तक काली कौड़ी भी नहीं दी।

मां— और मुझे तो कुछ मिलने की आशा भी नहीं है ! गुल के पिता, देखो तो बेचारे गुल की तो आँखें ही धँस गई हैं। है कोई बहू को विचार ! ! मैं कहती हूँ अपने पति का ध्यान नहीं रखोगी तो फिर किसका रखोगी ! ! !

गुल— मां, भला शील इसमें क्या कर सकती है ?

मां— सुना भाई सुना ! (नकल करते हुए) शील क्या कर सकती है ? छोरे, तुम भी आ गए बहू के चक्कर में। (मुँह बिचकाती है)

गुल— मां ! (क्रोध से)

मां— अरे, अब सुन लिया-सुन लिया। मां (चिढ़ाते हुए) ! चिल्लाकर बेकार में अपना गला मत सुखाओ। अभी से हाथ नहीं रखा तो फिर पत्नी का गुलाम बनना पड़ेगा, हाँ !

पिता— हाँ बेटे, तुम्हारी मां ठीक कहती है। मुझे ही देख लो !

मां— आपको भी मसखरी सूझी है। मैं जा रही हूँ संतमुखी के मन्दिर। आप बाप-बेटे बैठकर मसखरी करिये।

पिता— नहीं-नहीं गुल की मां ! तुम क्यों जाती हो, जायें तुम्हारे दुश्मन···· ····अच्छा सुनो, एक रुपया तो खुला देदो, बीड़ी लेनी है।

मां— हाँ ऽऽ ! तो यह बात है ! !

पिता— हाँ गुल की मां, एक रुपया चाहिये।

मां— (रुपया निकालकर देते हुए) यह लीजिये एक रुपया और सुनिये, बोड़ी का बण्डल साठ पैसे का आयेगा। बाकी चालीस पैसे वापस ले आइयेगा। कहीं रास्ते में छोले डबल-रोटी खाकर चसके लेकर पैसे ही पूरे मत कर दीजियेगा····अब जाइये न, खड़े क्यों हैं ?

पिता— जाता हूँ भाई जाता हूँ ! (जाता है)

मां— बेटे, तुम्हारे पिता का कोई रोजगार तो है नहीं। पेन्शन के दो सौ रुपयों में से भला क्या होगा ? तुम्हारी तनख्वाह मिलाकर भी घर का काम जैसे-तैसे चल पाता है।

गुल— हाँ मां, तुम ठीक कहती हो।

मां— सब कहते हैं कि मैं ठीक कहती हूँ, पर मेरी सुनता कौन है ? देखो तुम्हें रोज़ बस में आफिस आना-जाना पड़ता है····

गुल— ····हाँ मां, बस में बहुत भीड़ होती है और बैठने को जगह न मिले तो लटकते हुए जाना पड़ता है। अगर मिल भी जाय तो दम घुटने लगता है।

मां— इसीलिए तो कहती हूँ, रोज़-रोज़ पसीना मत बहाओ। बहू को कहो कि वह अपने बाप को चिट्ठी लिखकर दहेज के बाकी बचे दस हज़ार रुपये मंगवाले और तुम स्कूटर ले आओ।

गुल— मां, बात तो ठीक है।

मां— ठीक ! अरे ठीक नहीं, अच्छी है अच्छी ! स्कूटर के पैट्रोल से ज्यादा तो बस के भाड़े में ही खर्च हो जाता है। फिर अगर टाइम पर बस न मिले तो टैक्सियों वाले तो बिलकुल खाल ही उधेड़ लेते हैं।

गुल— वाह, मां वाह,····शील····ओ शील····।

शील— (अन्दर से ही) आ रही हूँ····।

मां— मैं जा रही हूँ, अगर प्रेम से नहीं माने तो एक-दो धौल जमाकर भी मनवा लेना।

गुल— मां !

मां— मां-मां मत करो, जो कहा है वही करो, समझे ?

(गुल की मां एक तरफ जा रही है, दुसरी तरफ से शील एक हाथ में प्लेट में पापड़ और दूसरे हाथ में चाय का कप लिये हुए आती है।)

शील— यह लीजिए, स्टोव में तेल खतम हो गया था, इसलिए देर हो गई।

गुल— शील ! तुम से एक विशेष बात कहनी है।

शील— कहिए मेरे स्वामी, मैं तो आपकी दासी हूँ ।

गुल— बात यह है कि, आफिस बहुत दूर होने के कारण मैं थक जाता हूँ ।

शील— मैं तेल गर्म कर लाती हूँ फिर आपके सिर पर मालिश करके पैर दबा दूँगी तो सारी थकान दूर हो जायेगी । (उठती है)

गुल— (हाथ पकड़कर बैठाते हुए) बैठो-बैठो शील, बात यह नहीं है । मेरे कहने का मतलब यह है कि····तुम्हारे पिता को हमारे दस हजार रुपये तो देने ही हैं ।

शील— हाँ, वह तो वे देंगे····पर····।

गुल— पर क्या ?

शील— पिताजी की चिट्ठी आई है कि वे देवी के लिए कोई घर तलाश कर रहे हैं ।

गुल— यह तो बहुत अच्छी बात है ।

शील— वे आपको दहेज की बकाया रकम कुछ ठहर कर देंगे ।

(गुल की मां जो बैठक के कमरे के पर्दे के पीछे खड़ी थी और बीच बीच में झांककर मुँह बिचकाती रही थी, अन्दर आ जाती है ।)

मां— क्या कहा ? कुछ ठहर कर देंगे या देने की मंशा ही नहीं है । बहू ! कान खोलकर सुन लो, तुम्हारे माता-पिता सोचते हैं कि दो चार साल यूं ही निकल जायें । फिर तो गुल वैसे भी तुम्हारे इशारों पर नाचेगा और उन्हें कुछ भी देना नहीं पड़ेगा ।

शील— नहीं मांजी····! (आंखों में आँसू आ जाते हैं और सुबकने लगती है)

मां— अरी चुप····मैं सब समझती हूँ, कोई पागल नहीं हूँ । मेरे बेटे को तो देखो, बेचारे का मुँह ही पीला पड़ गया है । मैं पूछती हूँ क्या पाप किया है, इसका अपना पैसा होते हुए भी दुखी रहे ।

शील— मां जी, वे लोग पैसे देने से इन्कार थोड़े ही कर रहे हैं । (रोते-रोते सास के पैरों पर गिर जाती है ।)

मां— छोड़, छोड़ मुझे (शील को दूर हटाते हुए) अरे निगोड़े, तुम भी खड़े देख रहे हो ? मार इसके कोई थप्पड़-मुक्का फिर देख कैसे सीधी होती है ।

गुल— मां, तुम यह क्या कर रही हो ?

मां— मैं तुम्हारा भला कर रही हूँ । जाओ, जल्दी से कागज़ और पैन लेकर आओ और बहू से चिट्ठी लिखवाओ । फिर देखो कैसे इसका बाप पैसे लेकर दौड़ता आता है ।

शील—. (सुबकते हुए) मां जी, उनकी हालत····

मां— चुप रह ! मेरे सामने बोलती है, शर्म नहीं आती !

(गुल अन्दर जाकर कागज और पैन लेकर आता है ।)

गुल— (शील से) यह लो कागज और पैन ।

मां— हाँ लिखो, मैं लिखवाती हूँ····पूज्य पिताजी····लिखा ?

शील— लिख्ती हूँ ।

मां— अभी तक तो हाथ में पैन भी नहीं पकड़ा ढंग से । अरी, पूज्य कहा है पूज्य, कोई आग लगा, हाड सड़ा नहीं कहा है मैंने !

शील— (सुबकते हुए) पूज्य पिताजी····।

मां— मैं यहाँ बहुत मजे में हूँ, आप कोई चिन्ता नहीं कीजियेगा । इनकी तबीयत एक महीने से बहुत खराब है····।

शील— हाँ ! (शील के हृदय से एक आह निकलती है)

गुल— पर मां, मैं तो ठीक हूँ !

मां— ठीक तुम्हारा सर, मिनी बस में बैठ-बैठ कर शरीर ही आधा हो गया है । जाकर आइने में शक्ल देखो ।

गुल— मां ! (जोर से)

मां— जोर से मत बोलो, मैं कहती हूँ इसे लिखने दो····हाँ तबीयत बहुत खराब है, खून की उल्टियाँ हुई हैं····।

गुल— आखिर तुम यह····।

मां— चुप, बस दो मिनट चुप करके बैठो····हाँ खून की उल्टियाँ हुई हैं, बहुत कमजोर हो गये हैं । मुझे मेरे देवता स्वरूप सास-सुसर ने मना किया है····।

गुल— देवता !

मां— तुम चुप करके बैठो निगोड़े····हाँ, पर मेरी इच्छा है कि आप कोशिश करके दस हजार रुपये जल्दी भिजवादें । मैं इन्हें स्कूटर लेने के लिये कहूँगी । यह चिट्ठी मैं सबसे छिपाकर लिख रही हूँ, क्योंकि मेरी ससुराल वाले दहेज के बिलकुल खिलाफ हैं । मैं समझती हूँ कि आपको मेरे सुहाग से अधिक पैसा प्यारा नहीं होगा । यह चिट्ठी तार समझना और पैसे जल्दी भिजवा देना····बेटे, (गुल से) अब मैं मन्दिर जाकर दो वचन सुन आऊं, तुम यह चिट्ठी जाकर अभी पोस्ट कर आना ।

(मंच पर धीरे-धीरे प्रकाश घटने लगता है और कुछ क्षणों के लिए बिलकुल अन्धेरा रहता है । फिर धीरे-धीरे प्रकाश बढ़ने लगता है)
(कुछ समय पूर्व ही शील को उसके पति तथा सास ने मिलकर खूब पीटा है । कोड़ों की मार से उसकी पीठ लहू लुहान हो गई है । वह जमीन पर पड़ी सिसक रही है । बैठक के कमरे में सोफा पर गुल की मां बैठी है । पास में ही गुल खड़ा है । शील की सिसकियाँ साफ़ सुनाई दे रही हैं ।)

गुल— (कड़ककर) कान खोल कर सुन लो, अगर एक सप्ताह के अन्दर तुम्हारा बाप दस हजार रुपये लेकर नहीं आया, तो तुम्हारे लिए इस घर के दरवाजे सदा-सदा के लिए बन्द हो जायेंगे ।

शील— न····न····नहीं····मुझ पर दया कीजिये····स्वामी····।
(वह रोती हुई मिन्नत भरे स्वर में पति की तरफ देखकर हाथ जोड़कर कहती है)

मां— आई है बड़ी दया की बच्ची । मेरा गुल कोई लूला-लंगड़ा है ! कोई अन्धा काना है, एम. ए. पास है एम. ए. ! बैंक में क्लर्क है····।

शील— (शील अपनी सास के पैर पकड़ती है) मां जी !

मां— छोड़, छोड़ मेरे पैर (और वह पैरों से उसे धकेल देती है) इन आंसुओं के चक्कर में मैं नहीं आने वाली, हाँ ! अगर तेरा बाप पैसे लेकर नहीं आया तो मैं गुल का रिश्ता कहीं और करूँगी । अच्छा बेटे (गुल से) मैं मन्दिर जा रही हूँ, आज बड़े सन्तजी आए हुए हैं । घर में तो हर समय कलह ही कलह लगी हुई है, जाकर दो घड़ी वचन सुनूं तो मन को शान्ति मिले । (जाती है ।)

गुल— (क्रोध में, जोर से) सुनो, मैं भी जा रहा हूँ, याद रखना एक सप्ताह का समय दिया है तुम्हें ! चाहो तो अपने बाप को एक और चिट्ठी भी लिख देना । नहीं तो इस घर के दरवाजे तुम्हारे लिए सदा के लिए बन्द हो जायेंगे ।
(गुल चला जाता है । शील धरती से उठकर खड़ी होने का प्रयत्न करती है, पर वापस गिर जाती है । वह हाथ पीछे मोड़कर पीठ सहलाती है । उसका हाथ खून से लाल हो जाता है । खून से भरा हाथ आँखों के सामने लाकर देखती है और फूट-फूट कर रोने लगती है—और रोते-रोते····

शील— मैंने क्या पाप किया है·······मैंने क्या पाप किया है·······हाँ !····एक सप्ताह के अन्दर·······एक सप्ताह के अन्दर·······नहीं···नहीं···नहीं ऽ ऽ ऽ·······! (शील चिल्लाकर उठ खड़ी होती है ।)

बाहर से घन्टी बज उठती है और साथ ही घन्टी बजाने वाला व्यक्ति भी अन्दर आ जाता है । आने वाली स्त्री है जो शील की ननद की सहेली कान्ता है ।)

कान्ता— नमस्ते भाभी ! क्यों, आज घर में अकेली हो क्या ?

शील— ('हां' में सिर हिलाकर दोनों हाथ जोड़ देती है ।)

कान्ता— क्यों भाभी, तबीयत तो····यह तुम्हारे हाथ में क्या लगा है ?

शील— ('ना' में सिर हिलाती है और बिलख-बिलख कर रोने लगती है ।)

कान्ता— यह सब क्या है ?

शील— मेरा भाग्य !

कान्ता— बहन, जो भी बात हो मुझे बताओ, मैं किसी से कुछ नहीं कहूँगी । तुम इस बात से मत डरो कि मैं तुम्हारी ननद की सहेली हूँ ।

शील— बहन····तुम, किस-किस के दुख दूर करोगी ?····यह तो हर घर की कहानी है ।

कान्ता— मैं तुम्हें वचन देती हूँ बहन, तुम्हें मेरी सौगन्ध है, मुझे सब कुछ बतादो तुम्हें क्या कष्ट है ?

शील— मुझ से····मुझ से दहेज के बाकी रहे दस हजार रुपये···माँगे गये हैं···बाबूजी, अगर पैसे नहीं चुका सकेंगे····तो····तो····मुझे इस घर से····घर से निकाल देंगे····(बिलखने लगती है ।)

कान्ता— रो मत बहन (दृढ़ता से) बस, इतनी ही बात है न, तुम्हारी ससुराल वालों को केवल दस हजार रुपये चाहिए न ? उन्हें जल्दी ही ये रुपये मिल जायेंगे ।

शील— बहन तुम····।

कान्ता— हाँ मैं, जल्दी ही दस हजार रुपये की व्यवस्था करके आऊँगी । (उठती है ।)

शील— कुछ देर तो बैठतीं ।

कान्ता— बहन, अब तो तभी आकर बैठूँगी जब दस हजार की व्यवस्था हो जायेगी । अच्छा मैं चलती हूँ । (जाती है ।)

(मंच पर धीरे-धीरे प्रकाश घटने लगता है और कुछ पल अन्धेरा

रहता है। फिर धीरे-धीरे प्रकाश बढ़ने लगता है। प्रकाश होने पर, सोफा पर गुल के माता-पिता बैठे दिखाई देते हैं। दोनों गुल के लिए नया सम्बन्ध करने की बातें करते हैं।)

पिता— गुल की मां, मेरी इच्छा है सेठ टोपणदास के घर से गुल का रिश्ता स्वीकार कर लें।

मां— गुल के बापू, एक सप्ताह अभी कल पूरा होगा। आप देखते रहिये मैं क्या-क्या करती हूँ !

पिता— अच्छा ! बहुत बड़ी योजना बनाई है क्या ?

मां— हाँ, मैं जानती हूँ, शील का बाप दस हजार रुपये दे नहीं सकेगा। इसलिए मैंने यह योजना बनाई है।

पिता— जरा मैं भी तो सुनूं, कि तुम्हारी योजना क्या है ?

मां— गुल के बापू, आप तो रहे भगत के भगत। तभी तो टोपणदास के घर की बात कर रहे हैं। टोपण के पास अब सिर्फ सेठों की टोपियाँ ही रही हैं, बाकी सब साफ़ है !

पिता— अच्छा !

मां— हाँ ! इसीलिए मैंने भागू की मां को 'हाँ' कह दी है।

पिता— भागू की लड़की ? वह तो तोतली है !

मां— तोतली खाक है। सुन्दर ऐसी है जैसी कान्हा की मूरत। बस थोड़ा सा हकला कर बोलती है और गुल के बापू, जानते हैं ! भागू की मां कह रही थी कि वह दहेज में एक लाख रुपया देगी।

पिता— एक लाख रुपया !

(घर के अन्दर आकर एक रिक्शा चालक पूछता है।)

रिक्शावाला—सेठ भुगड़ेमल का घर यही है।

मां— हाँ····हाँ यही है, क्या बात है ?

पिता— तुम कहीं हमारी बातें तो नहीं सुन रहे थे ?

मां— पर तुम घन्टी बजाये बिना अन्दर कैसे आ गये ? गुल के बापू (गुल के पिता की तरफ देखकर), मुझे तो यह कोई चोर लगता है।

रिक्शावाला—नहीं बहन जी, नहीं। मैं चोर नहीं हूँ, मैं रिक्शावाला हूँ। आपका मेहमान आया है।

पिता— मेहमान !

रिक्शावाला—हाँ, एक स्त्री है। बेचारी की टाँग टूटी हुई है।

मां— यह टाँग टूटी फिर कौन है ?

रेनु— (अन्दर आती है, बैसाखियों के सहारे) मैं हूँ मां।

मां— रेनु बेटी तुम !

रेनु— हाँ मां, मैं। (सिसकने लगती है।)

रिक्शावाला—अच्छा बहनजी, मैं चलता हूँ।

मां— बेटी, यह सब कैसे हुआ ?

पिता— तुम्हारे साथ कोई नहीं आया ?

रेनु— (बिलख-बिलख कर रोते हुए) नहीं बाबूजी····।

मां— रेनु बेटी, बता तो तुम्हारा यह हाल किसने किया है ?
(शील और गुल भी अन्दर आते हैं।)

रेनु— भाग्य ने ! मां, भाग्य ने····मेरी ससुराल वाले दहेज के पचास हजार रुपये और भी माँग रहे हैं।

गुल— पचास हजार रुपये !

रेनु— हाँ, इनको प्राईवेट अस्पताल खोलने के लिए चाहिये।

पिता— क्या ? राकेश ने नौकरी छोड़ दी है ?

रेनु— नहीं बाबूजी, पर वह कह रहे हैं कि आप रुपये भेज दें तो फिर वह नौकरी छोड़कर अपना अस्पताल खोलेंगे।

मां— पर तुम्हारी यह हालत····।

रेनु— मैंने उन्हें कहा कि मेरे माता-पिता इतने पैसे कहाँ से लायेंगे ? उस पर उन्होंने····उन्होंने मेरी········।
(बेहोश होकर गिर जाती है)

पिता— गुल, तुम जल्दी जाकर डाक्टर को ले आओ।

मां— बहू, तुम एक गिलास पानी भर लाओ।
(शील अन्दर जाकर एक गिलास पानी भर लाती है।)

शील— यह लीजिये, मांजी।
(गुल की मां गिलास लेकर, रेनु के मुँह पर पानी के छींटे मारती है। रेनु धीरे-धीरे आँखें खोलती है। पर वह कराह रही है।)

रेनु— आह····आह····आह····।

मां— हे भूलेलाल, यह किस पाप की सजा दे रहे हो ?········कृपा करो बाबा····कृपा करो····।
(गुल डाक्टर को लेकर आया है। डाक्टर रेनु की जांच करता है।

गुल और उसके माता-पिता हाथ जोड़कर डाक्टर से बिनती करते हैं और शील सोफे पर लेटी रेनु के सिरहाने बैठी उसके सिर पर हाथ फेर रही है।)

डाक्टर— टांग में कोई गहरी चोट लगी है, जिसका प्रभाव दिमाग तक पहुँच चुका है। अगर जल्दी ऑपरेशन नहीं किया गया तो इनके पागल होने की संभावना है।

मां— डाक्टर, क्या मेरी लड़की ठीक नहीं हो सकती ?

डाक्टर— बहन जी, यह सब तो मालिक के हाथ में है। हां, यह लीजिए (पर्ची लिखकर देता है) जब तक ऑपरेशन न करवाएं तब तक ये दवाइयाँ देते रहियेगा।

पिता— ऑपरेशन पर कितना खर्च होगा ?

डाक्टर— कम से कम दस हजार रुपये तो लग ही जायेंगे।

मां— (आश्चर्य से) दस हजार रुपये !

डाक्टर— अच्छा मैं चलता हूँ।
(डाक्टर चला जाता है। सब लोग सोफा के पास आते हैं)

पिता— बहू, बेटी तुम रेनु को अन्दर ले जाकर आराम कराओ। (दोनों जाती हैं) गुल की मां, एक सच्ची बात कहूँ, पर तुम्हें बहुत कड़वी लगेगी। यह सब बहू पर अत्याचार करने का फल है।

मां— गुल के पिता ! आप रेनु के पिता होकर ऐसी बातें कर रहे हैं ?

पिता— गुल के बिवाह के बाद, पिता तो मैं बहू का भी हूँ।

मां— मैं कहती हूँ कि, हमने तो ऐसा कोई वचन नहीं दिया था। बहू के पिता ने तो हमारा पल्लू पकड़कर बिनती की थी कि दहेज के दस हजार रुपये जल्दी देंगे।

पिता— गुल की मां, दहेज के मामले में कोई पहले पल्लू पकड़ता है तो कोई बाद में।

डाकिया— श्रीमान्, यह रजिस्ट्री है (अन्दर आते हुए) श्रीमती रेनु देवी के नाम।

मां— रेनु के नाम ? कहाँ से आई है ?

डाकिया— बहनजी, दिल्ली से आई है।

मां— दिल्ली से ! (निराश होती है)

पिता— मुझे दो। (लेता है)

डाकिया— यह, यहाँ पर दस्तखत कीजिये।

(गुल के पिता दस्तखत करते हैं और डाकिया चला जाता है। गुल के पिता लिफाफा खोल रहे हैं)

मां-- किसकी चिट्ठी है ?

पिता-- राकेश की। (गुल भी आ जाता है।)

गुल-- यह लिफाफा कहाँ से आया है बाबूजी ?

पिता-- तुम ही पढ़कर देख लो बेटे।

मां-- क्या रिटायर होने के बाद, आप पढ़ना भी भूल गये हैं ?

पिता-- गुल की मां, मैं पढ़ना नहीं भूला हूँ, पर तुम्हारी समझ जरूर रिटायर हो गई है। (क्रोध से)

मां-- बेटे तुम ही बताओ, क्या लिखा है ?
(गुल पिता की आँखों में देखता है पर आंखें मिला नहीं सकता और उसकी आंखें झुक जाती हैं। पर उसकी मां उतावली से पूछती है।)

मां-- बता तो बेटे क्या लिखा है ?

गुल-- वह····वह····रेनु को तलाक देना चाहते हैं।

मां-- क्या !

गुल-- हाँ मां, यह चिट्ठी नहीं तलाकनामा है।

मां-- तलाकनामा !

पिता-- हाँ, यह तलाकनामा है ! तलाकनामा !! (ठहरकर) धन्य है राकेश, जिसने तलाकनामा तो भेजा है। अरे, तुम पर खुदा की मार, तुम तो बिना तलाकनामे के ही बहू को घर से निकाल रही थी।

गुल-- बाबूजी ! यह आप क्या कह रहे हैं ?

पिता-- मैं क्या कह रहा हूँ ? (क्रोध से) अरे, तुम लोग क्या-क्या कह चुके हो, सो भूल गये ? बहू पर हन्टर चलाना भूल गये ? स्कूटर के लिए दस हजार रुपये माँगना भूल गये ? जीती-जागती बहू होते हुए दूसरा रिश्ता········।

मां-- गुल के बापू, यह समय बहस करने का नहीं।

पिता-- यह समय····यह समय····तुम्हारा गला घोंटने का है····गला····
(गुल का बाप क्रोध के मारे लाल-लाल आँखों से घूरता हुआ हाथ उठाकर गुल की मां की तरफ बढ़ता है। गुल पिता को रोकता है।)

गुल-- बाबूजी !

पिता— मर गए तुम्हारे बाबूजी·······सारी उम्र तेरा बाप पैदल चला, तुम्हारी मां पैदल चली·······और तुम भी पैदल चले, पर·······पर दहेज के कारण उसे तुम्हारे लिए स्कूटर चाहिए !·······पूछ उससे, उसके बाप ने भी कभी स्कूटर चलाया था ?·······

गुल— पर बाबूजी·······

पिता— चुप, आज मुझे कहने दे, मुझे कहने दे कि औरत की दुश्मन औरत ही है, जो बहू पर तो अत्याचार कर सकती है पर·······पर बेटी पर अत्याचार सह नहीं सकती । बेटे ! कुल्हाड़ी जब अपनी गर्दन पर लगती है तब ही चोट का पता पड़ता है, दूसरे पर वार करना तो बहुत सरल है । (रोता है ।)

(मंच पर धीरे-धीरे अन्धेरा होने लगता है और कुछ देर के लिए बिलकुल अन्धेरा हो जाता है । फिर धीरे-धीरे प्रकाश बढ़ने लगता है । बैठक के कमरे में गुल का बाप अकेला बैठा है । शील आती है ।)

शील— बाबूजी, (हाथ में बहुत से जेवर हैं) ये लीजिए !

पिता— बेटी ! यह ·······यह तुम्हें किसने कहा ?

शील— किसी ने भी नहीं बाबूजी·······बाबूजी, कल·······कल दीदी को तलाकनामा हाथ लग गया ! (सिसकते हुए)

पिता— क्या कहा ! तलाकनामा रेनु ने·······देख लिया !·······हे भगवान, यह क्या किया तुमने·······कहाँ है बेटे वह लिफाफा ?

शील— बाबूजी, उन्होंने तलाकनामे पर दस्तखत करके भिजवा दिया ।

पिता— (चिल्लाकर) नहीं ! नहीं बेटे···········कहो यह झूठ है···········बेटे झूठ है ।

शील— बाबूजी, यह सच है, दीदी ने तलाकनामे पर दस्तखत करके, लिफाफा मनु की मां के बेटे के हाथ भेज दिया ।

पिता— जो होना था वह हो चुका·······पर·······पर तुम ये जेवर······· क्यों लेकर आई हो ?

शील— दीदी के ऑपरेशन की व्यवस्था के लिए····। (चली जाती है)

पिता— हे प्रभु ! यह तो कोई देवी लगती है ।

मां— (अन्दर आते हुए) कौन देवी लगती है ?

पिता— तुम ! (जेवर छिपा दिए)

मां— गुल आया क्या ?

पिता— नहीं, अभी तक तो नहीं आया है ।

मां-- कुछ पैसों की व्यवस्था हुई ?

पिता-- नहीं, गुल की मां, गुल आये तो पता चलेगा ।

मां-- मेरी सोने जैसी बेटी को मैंने लंगड़ा कर दिया·······। (रोती है ।)

पिता-- रो मत, गुल की मां, रो मत, रोने से भला क्या होगा ?

गुल-- (अन्दर आता है) बाबूजी ! कोई व्यवस्था नहीं हो सकी ।

मां-- इसका मतलब यह हुआ कि मेरी बेटी लंगड़ी ही रहेगी··········हे झूलेलाल ऐसा अत्याचार क्यों कर रहे हो, अरे, इस बेचारी लड़की ने भला तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?

गुल-- अब क्या होगा बाबूजी ?

मां-- अब भी एक रास्ता है ।

पिता-- वह क्या है ?

मां-- मैं चाहती तो नहीं·······पर·······पर·······इस समय अगर बहू के पिता पर दबाव डालकर दस हजार रुपये माँगे जायें·······।

पिता-- (क्रोध से) गुल की मां ! जी तो चाहता है कि तुम्हारी यहीं पर समाधि बना दूँ ।

गुल-- बाबूजी····!

पिता-- चले जाओ·······दोनों मां बेटे यहाँ से, चले जाओ,·······जानते हो बहू देवी है, देवी·······यह देखो·······रेनु के इलाज के लिए उसने अपने सारे जेवर उतार कर दे दिये हैं ।

(बाहर से भुगड़ेमल का दोस्त रामचन्द्र आवाज देकर अन्दर चला आता है ।)

रामचन्द्र-- भाई भुगड़ामल घर में है क्या·······राम-राम भाई, राम-राम······· कहो भाई क्या हाल हैं ?

पिता-- ठीक है ।

रामचन्द्र-- लगता है तुम्हारी तबीयत खराब है । खैर, कोई बात नहीं, (सोफे पर बैठते हुए) मैं ऐसी बात बता रहा हूँ कि तबीयत फड़क उठेगी ।

पिता-- ऐसी क्या बात है ?

रामचन्द्र-- भाई, तुम्हारा वह दूसरा नम्बर लड़का है न, जो मेडीकल कालेज के हॉस्टल में रहता है ?

पिता-- हाँ हाँ, उसे क्या हुआ है ?

रामचन्द्र-- हुआ कुछ नहीं, पर कुछ करना है ।

पिता-- क्या मतलब ?

रामचन्द्र-- मतलब यह कि उसके लिए एक बहुत अच्छा रिश्ता ध्यान में है । एक लाख रुपया तो सिर्फ नगद देंगे दहेज में·······।

पिता—— क्या कहा ? रिश्ता अच्छा है, क्योंकि वे दहेज बहुत देंगे ।

रामचन्द्र—— हां भाई, मेरी मानों तो भुगड़े से पिस्ता हो जाओगे ।

पिता—— रामचन्द्र ! कान खोलकर सुन लो, आगे भी कभी कोई रिश्ता लेकर आओ तो मेरे सामने दहेज का नाम भी मत लेना, समझे !

रामचन्द्र—— क्यों भाई, सरकार के कानून से डर गए क्या ? सरकार तो कानून बनाती रहती है, पर मानने वाले तो हम लोग ही हैं न ! तुम सरकार-वरकार की चिन्ता छोड़ो ।

पिता—— न मैं सरकार से डरा हूँ, न ही किसी कानून से । पर रामचन्द्र तुम डरो उस भूलेलाल के कानून से ।

रेनु—— (अच्छी भली अन्दर आते हुए) नमस्ते अंकल ।

रामचन्द्र—— नमस्ते रेनु बेटे, तुम यहाँ हो ?

रेनु—— हाँ, अंकल ।

मां—— रेनु ! तुम्हारी टाँग………यह सब क्या है ?

रेनु—— भैया (गुल से) आप चलिए टैक्सी कर स्टेशन चलें, ये आने वाले हैं

पिता—— पर बेटे, राकेश ने तो तुम्हें तलाक दिया है न !

रेनु—— तलाक ! हा हा हा (हँसकर) बाबूजी, तलाक देना तो दूर, वह तो तलाक का नाम भी नहीं ले सकते । और मैं आपको बताऊँ, यह सब नाटक भी मैंने उनके कहने से ही किया है ।

पिता—— पर क्यों !

रेनु—— इसलिए कि मां की आँखों पर दहेज का पर्दा चढ़ गया था और आपकी आंखों पर भी चढ़ रहा था । पर अब उसका पूरा पूरा इलाज हो चुका है । इसलिए अब मेरा वापस जाना ही ठीक है ।

मां—— तो यह सब नाटक था !

रेनु—— हाँ, यह सब नाटक था ।

रामचन्द्र—— भाई भुगड़ामल, अब समझा कि तुम्हें दहेज से नफरत क्यों है । सच कहते हैं, सरकार चाहे कितने ही कानून बनाये, पर यह मर्ज तो तभी दूर होगा जब हर माता-पिता को आपकी तरह अहसास होगा ।

रेनु—— देर हो रही है भैया, जल्दी चलिये ।

गुल—— चलो, अब सब मिलकर जीजाजी को लेने चलते हैं, क्योंकि इस नाटक के असली डायरेक्टर तो वे ही हैं ।

सब जाते हैं………।

(पर्दा गिरता है)

—o—

राजस्थान सिन्धी अकादमी

जे-७, सुभाष मार्ग 'सी' स्कीम, जयपुर